हिन्दी-गौरव-ग्रन्थमालाका २ रा ग्रंथ ।

आरोग्य-दिग्दर्शन ।

मूल लेखक,

महात्मा मोहनदास करमचंद गाँधी ।

अनुवादक,

श्रीयुक्त पं० गिरिधर शर्मा नवरत्न ।

प्रकाशक,

गाँधी हिन्दी-पुस्तक भंडार;

कालबादेवी बम्बई ।

तीसरा संस्करण

क्रम-संख्या ७००

मूल्य सात आने ।

१९७६ भादों सुदी ।

प्रकाशक,
उदयलाल काशलीवाल,
गाँधी हिन्दी-पुस्तक भंडार;
कालवादेवी-वम्बई ।

मुद्रक,
चिंतामण सखाराम देवळे,
'मुंबईवैभव प्रेस,' सर्व्हंट्स् ऑफ इंडिया,
सोसायटीज् होम्, सँढर्स्ट रोड,
गिरगाँव-वम्बई ।

म० गाँधीजीकी प्रस्तावना।

लगभग बीस वर्षसे मैं आरोग्यके सम्बन्धमें विचार करता आ रहा हूँ। विलायतमें कुछ खास नियमों पर रहनेके कारण खाने पीने आदिका सब प्रबन्ध मुझे अपने ही हाथों करना पडता था, इस कारण उस समय मुझे जो जो अनुभव हुआ उस परसे मैंने कई विचार स्थिर किये हैं। सर्व-साधारण पाठकोंके लाभकी दृष्टिसे मैं उन विचारोके सम्बन्धमें कुछ लिखना उचित समझता हूँ।

अँगरेजीमें एक कहावत है कि 'रोग दूर करनेकी अपेक्षा उसे मूलहीमे न होने देना बहुत अच्छा है।' इसी बातको यह कहावत भी पुष्ट करती है कि 'पानीके पहले बाँध बाँधा जाय।' रोग न होनेके उपायोंको उपयोगमें लानेको अँगरेजीमें 'हाईजन' कहते हैं। हमारी भाषामे इसे 'आरोग्य-सरक्षण-शास्त्र' कहते हैं। यह शास्त्र वैधक शास्त्रके पृथक् समझा जाता है। कुछ लोग इसे वैद्यकका ही अंग बतलाते हैं। मैं जो इसमे भेद बतला रहा हूँ, इसका सिर्फ यही कारण है कि प्रधानतासे इन प्रकरणोंमें आरोग्य रक्षाके उपाय ही बतलाये जावेंगे। जिस भाँति खोया हुआ रत्न बडी कठिनतासे मिलता है और जितना प्रयत्न हमें उसकी रक्षाके लिए करना पडता है उससे कहीं अधिक उसके ढूँढ़नेके लिए करना पडता है, उसी भाँति आरोग्य-रत्न एक बार भी यदि हमारे हाथसे खो गया—आरोग्यको हम गँवा बैठे—तो फिरसे उसे प्राप्त करनेके लिए हमें समय और प्रयत्नका बहुत ही व्यय करना पडेगा, इस कारण विचारशील मनुष्योंको आरोग्य-रक्षाके नियमों पर बहुत ही अधिक ध्यान देनेकी आवश्यकता है। हम इस जगह इस बात पर भी विचार करेंगे कि कारणान्तरोंसे नष्ट हुआ आरोग्य किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है।

अँगरेजीके प्रसिद्ध कवि मिल्टनने लिखा है कि मनुष्योंका मन ही स्वर्ग और नरक है। इसके सिवा न तो कोई नरक पृथ्वीके नीचे है और न स्वर्ग आकाशमे। हमारे शास्त्रोंमें भी यह कहा गया है कि "मन एव मनुष्याणां कारण बन्ध-मोक्षयोः।" अर्थात् मन ही बन्धन (नरक) और मोक्ष (स्वर्ग) का कारण है। इस नीतिके अनुसार यह कहा जा सकता है कि अपनी निरोग या सरोग अवस्थाका मनुष्य स्वयं ही कारण है। जिस भाँति हम अपने कर्मोंसे—अनुचित

आहार विहारसे—बीमार हो जाते हैं उसी भाँति उसी प्रकारके विचारोंसे भी हमें बीमार होना पड़ता है । ऐसे बहुतसे उदाहरण देखे गये हैं कि बच्चेको 'हैजा' हुआ कि उसे देख कर उसके पिताको भी हैजा हो गया है । एक प्रसिद्ध वैद्यने लिखा है कि जितने बीमार महामारी आदि रोगों द्वारा मरते हैं उससे भी ज्यादा लोग केवल भयके कारण मर जाते हैं। यह कहावत विचारने योग्य है कि 'डरपोंक विना मौतके मर जाता है ।'

इसके सिवा अज्ञान भी आरोग्यको नष्ट करनेका एक प्रधान कारण है । हम पर कभी कोई आकस्मिक विपत्ति आ पड़ती है तो उस विषयमें कुछ जानकारी न होनेके कारण निरुपाय होकर हम बड़े ही घबरा उठते हैं और फिर उस घबराटके मारे, जाते हैं अच्छा करने और हो जाता है बुरा । शरीरसे सम्बन्ध रखनेवाले साधारण नियमोंकी भी हमें जानकारी न होनेके कारण बहुत बार हम न करने योग्य कामोंको भी कर बैठते हैं । अथवा स्वार्थी, धूर्त और 'उँट-वैद्य' के जैसे वैद्योंके हाथमें पड़ कर सिर पर अनेक तरहकी विपत्तियाँ उठा लेते हैं । यह बात आश्चर्य-कारक होने पर भी सत्य है कि हमें दूर पर रक्खी हुई वस्तुके ज्ञानकी अपेक्षा हमारे पास रक्खी हुई वस्तुका बहुत ही कम ज्ञान होता है । हमें अपने मुहल्लेकी भूगोलका जानना अच्छा नहीं लगता, पर इंगलैंडके गाँव, नदी वगैरहके नाम हम खूब रट डालते हैं । आकाशके तारोंके सम्बन्धमें हम झगडा करते हैं, परन्तु अपने छप्परका ज्ञान हमें विलकुल ही नहीं होता । आकाशके तारोंकी गिनती कर डालनेका हम विचार करते हैं, परन्तु हमारे छप्परमे क्या है और कितने खपरे हैं, इस बातको जानेकी हमारी इच्छा ही नहीं होती । हमारी आँखोंके सामने होते हुए कुदरती नाटकका देखना हमें पसन्द नहीं पड़ता, पर थियेटरोंके ढोंग देखनेको हमारा मन बड़ा ही ललचाने लगता है । इसी प्रकार हमारे शरीरमें क्या हो रहा है, वह क्या है; किसका बना हुआ है, उसमे हड्डी, मांस, खून, वगैरह कैसे बनते हैं, वे सब क्या करते हैं; शरीरमें बोलनेवाला कौन है, हमारी गति किस कारणसे हो रही है; हममें एक-बार अच्छे और एक-बार बुरे विचार क्यों उत्पन्न होते हैं, हमारी इच्छाके विरुद्ध हमारा मन हजारों लाखों मील कैसे दौड़ जाता है, जब कि हमारा शरीर एक चिउँटीकी तरह बड़ा ही धीरे धीरे चलता है, मन वायुसे भी हजार । वेगवान् क्यों है, इन सब बातोंका हमें विलकुल ज्ञान नहीं है । इस प्रकार

अत्यन्त समीपवर्ती शरीरके साथ हमारा जो सम्बन्ध हो रहा है उसकी हमें बहुत ही थोडी जानकारी है। और वह एक तरह नहींके बराबर है।

इस कठिन दशासे छुटकारा पानेके लिए यत्न करना प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है। यद्यपि शरीर और मनके सम्बन्धका जानना सहज नहीं है—बडा कठिन है; परन्तु तब भी शरीरकी साधारण बातोंका थोडा-बहुत ज्ञान होना सबहीके लिए आवश्यक है। यही नहीं, किन्तु बालकोंकी शिक्षामें भी इस विषयका समावेश होना चाहिए। हमारी उँगली कट जाय और हम उसका कुछ उपाय न कर सकें, हमारे पाँवोंमें काँटा चुभ जाय और हम उसे न निकाल सकें, सर्प काट खाय और हमें इस बातकी जानकारी न हो कि उस समय निर्भय रह कर हम क्या उपाय करें, ऐसी ही और बहुतसी बातें हैं, उन पर यदि हम विचार करें तो हमें सिवा लज्जित होनेके और कुछ न होगा। यह कह देना कि साधारण मनुष्य इस विषयमें कुछ नहीं समझते, केवल मिथ्याभिमान है या मनुष्योंको ठगनेका छुरेसे बुरा प्रपंच है।

यह नहीं कहा जा सकता कि इस प्रकारकी पराधीनता और अज्ञानसे साधारण पाठक मुक्त होंगे। तब ऐसी दशामें जो इन लेखोंके लिखनेका प्रयत्न किया गया है वह इसी लिए कि पाठक इनके पंजेसे थोड़ा-बहुत छुटकारा पा सकें। इसके सिवा एक बात और है, और वह यह कि इन लेखोंमें जुदी जुदी पुस्तकोंके जुदे जुदे विचारोंका निचोड रहेगा, क्योंकि इन विषयोंकी कई पुस्तकोंको पढ़ कर उनके परस्पर विरोधी विचारों पर मैंने खूब मनन किया है, और उनका प्रयोग कर—उन्हें ठीक तरह आजमा कर—अपने विचार स्थिर किये हैं। इस कारण इस पुस्तकको पढ कर इस विषयमें नये नये प्रवेश करनेवाले मनुष्यको फिर अन्य परस्पर-विरोधी विचारोंको पढ़ कर भी किसी प्रकारकी कठिनाइयोंका सामना न करना पडेगा और वह बडी सरलतासे इस विषयको जान सकेगा। एक पुस्तकमें लिखा है कि अमुक स्थितिमें गरम पानी काममें लाना चाहिए और दूसरी पुस्तकमें लिखा है कि ऐसी दशामें ठंडा पानी काममें लाना अच्छा है। नया मनुष्य इन परस्पर विरोधी बातोंको पढ़ कर बड़ी उलझनमें पड जायगा—वह कुछ भी स्थिर न कर सकेगा। ऐसे ही और भी अनेक विषय हैं, उन सब पर बुद्धिके अनुसार इन प्रकरणोंमें विचार किया गया है। इसके बाद फिर जो मूल पुस्तकोंको पढ़ना

चाहेंगे वे उन्हें पढ कर उनमें वताये हुए विरोधी उपायोमें अपनी वुद्धिके अनुसार फेर-फार कर सकेंगे। इस लिए यह लिखना अनुचित न होगा कि वहुतसे पाठकोको ये निवन्ध थोड़े-वहुत रूपमें अवश्य उपयोगी होंगे।

हम लोगोंकी कुछ ऐसी आदते पड गई है कि जहाँ कहीं हमें जरा भी दर्द हुआ कि हम तुरंत वैद्य, डॉक्टर या हकीमके घर दौड़े जाते हैं, और यदि ऐसा न भी करें तो उस समय हमें अपना पड़ोसी या अन्य कोई जिस दवाके लेनेकी सलाह देता है उसे हम तुरंत ले लेते हैं। हमें कुछ ऐसा विश्वास ही हो गया है कि विना दवाके रोग मिट ही नहीं सकता। परन्तु यह एक वड़ा भारी वहम है और इस वहमसे जितने लोग दुखी हुए हैं और होते हैं उतने और कारणोंसे न हुए और न होनेके। मतलव यह कि यदि हम यह समझ जायँ कि दर्द किसे कहते हैं तो हमे कुछ समाधानी हो सकती है। दर्दका अर्थ है दुःख और रोगका भी अर्थ यही है, इस लिए दर्दके मिटानेका उपाय करना तो योग्य है, पर उसके लिए दवाका उपयोग करना व्यर्थ है। यही नहीं, किन्तु ऐसा करनेसे वहुत वार नुकसान उठाना पडता है। हमारे घरमे कचरा पडा हुआ है और हम उसे वाहर फैंक देनेके वजाय ढक दें, तो उसका जैसा असर होगा ठीक वैसा ही असर रोग मिटानेके लिए ली गई दवाका होता है। उस कचरेको जो हमने ढक दिया उसका परिणाम यह होगा कि वह सड कर हमे हानि पहुँचावेगा। सिवा इसके उस परके ढकनको सड़ जानेसे कचरा और भी ज्यादा वढ़ जायगा। तव हमें दुगुने कचरेके निकाल फैंकनेकी चिन्ता करनी पड़ेगी। ठीक ऐसी ही दशा दवा लेनेवालेकी होती है। कचरा ढक देनेके वजाय यदि वाहर फैंक दिया जाय तो घर पहले जैसा साफ-सुथरा था वैसा ही फिर हो जाय। प्रकृति शरीरमें रोग, कष्ट आदि पैदा कर हमें सूचित करती है कि हमारे शरीरमें कचरा इकट्ठा हो गया है। प्रकृतिने स्वयं भी कचरे निकालनेके रास्ते शरीरमें रक्खे हैं और जव जव हमारे शरीरमे कोई रोग या कष्ट हो तो हमें समझना चाहिए कि अव प्रकृतिने शरीरमेसे कचरा निकलना शुरू किया है। कोई मनुष्य हमारे घरका कचरा निकालने लगता है तो हम उसका उपकार मानते हैं और जव तक वह कचरा निकालता रहता है तव तक हमें कुछ तकलीफ भी होती है तो हम चुपचाप ही रहते है। उसी भाँति प्रकृति जव तक हमारे शरीरमेंसे कचरा निकाल कर उसे साफ न

कर दे तब तक यदि हम चुपचाप रहें—प्रकृतिके विरुद्ध कोई दवा वगैरह न करें—तो हमारा शरीर निरोग होकर हमें दुःखोंसे छुटकारा मिल जाय। मान लीजिए कि हमें सरदी हो गई। उस समय हमें दवा लेने या सोंठ वगैरहके खानेकी कोई आवश्यकता नहीं है। हमें जानना चाहिए कि हमारे शरीरमें जो कचरा इकट्ठा हो गया है उसे बाहर निकाल फेंकनेके लिए प्रकृति आई है, उसे हमें रास्ता देना चाहिए। ऐसा करनेसे हम बहुत थोड़े समयमें ही साफ—निरोग—हो सकेंगे। यदि उस समय हम प्रकृतिका सामना करनेके लिए खड़े हो जायँ तो उसके लिए दुगुना काम बढ जायगा। एक तो कचरा दूर करना और दूसरा हमारे साथ लड़ना। इसके विपरीत यदि हम चाहें तो प्रकृतिको उलटी सहायता दे सकते हैं। हमें चाहिए कि जिस कारणसे कचरा इकट्ठा हुआ है उस कारणको ही हम दूर कर दें, जिससे कचरेका बढ़ना रुक जाय। इसके लिए उस समय हमें खाना बन्द कर देना चाहिए, ऐसा करनेसे कचरा न बढ़ेगा। इसके सिवा खुली हवामें योग्य कसरत करते रहनेसे भी हम कचरेको शरीरके द्वारा निकालते रहेंगे। शरीरको निरोग रखनेके इस सुनहरी नियमको प्रत्येक मनुष्य अपने आप ही प्रमाणित कर सकता है। परन्तु उस समय हमें अपने मनकी स्थिरता रखना बहुत ही आवश्यक है। जिस मनुष्यकी ईश्वर पर सच्ची श्रद्धा है वह तो हमेशा ऐसा करेगा ही। मनको स्थिर करनेमें ये विचार बहुत ही सहायक होंगे कि ऐसा कोई बीमा नहीं उतार सकता जो वैद्य या हकीमोंकी दवा लेनेसे रोग दूर हो ही जायगा, क्योंकि उनकी दवा लेनेवाले भी बहुतसे निरोग होते नहीं देखे जाते। और यदि ऐसा होता हो तो फिर इन प्रकरणोंके लिखनेकी कोई आवश्यकता ही नहीं पड़ती, और हम सब बड़े सुखसे जिन्दगीका उपभोग करते हुए दिखाई पड़ते।

अनुभव तो यह कहता है कि जहाँ एक बार हमारे घरमे श्रीबोतल देवीका प्रवेश हुआ कि फिर वे उस घरसे बाहर निकलती ही नहीं। असंख्य मनुष्य ऐसे देखे जाते है जो जिन्दगी भर किसी-न-किसी रोगसे ग्रसित रहते है, और फिर वे एकके बाद एक दवा बढ़ाते ही जाते हैं। वे प्रति दिन वैद्य या हकीमोको बदला करते हैं और रोग मिटा देनेवाले वैद्यकी तलाशमे निरंतर घूमा करते हैं, और अन्तमें स्वयं ख्वार होकर तथा औरोंको ख्वार कर, तड़फ तड़फ कर मर मिटते हैं। स्व० प्रसिद्ध जज स्टीवन हिंदुस्तानमें रह गये है। उन्होंने एक वार कहा था कि

'जिन वनस्पतियोंके सम्बन्धमें वैद्य लोगोंको बहुत थोड़ा ज्ञान है उन्हीं वनस्पतियोंको वे ऐसे शरीरमें पहुँचाते है जो शरीर उन वनस्पस्तियोंका ज्ञान उन वैद्योंसे बहुत थोड़ा रखता है। वैद्य लोगोंको जब इस बातका पूरा पूरा अनुभव हो जाता है तब वे भी इसी भाँति कहने लगते हैं।' डाक्टर मेजेन्दीने कहा है कि 'वैद्यक महा पाखण्ड है।' सर अेस्टली एक प्रसिद्ध डाक्टर हो गया है। उसने लिखा है कि 'वैद्यक-शास्त्र केवल अटकल पर रचा गया है।' सर जॉन फोर वझने कहा है कि 'अच्छे डाक्टरोके रहने पर भी बहुतसे मनुष्योंको कुदरतने ही निरोग किया है।' डाक्टर बेकरका कहना है कि 'लाल बुखारसे जितने रोगी मरते हैं उससे अधिक रोगी उसकी दवासे मरते हैं।' डाक्टर फरोथ कहते हैं कि 'डाक्टरीकी अपेक्षा अधिक अप्रामाणिक धंधा भाग्यसे ही कोई देख पड़ेगा।' डाक्टर टोमस वोटसन कहते हैं कि 'बहुतसे ऐसे आवश्यक प्रश्न हैं जिनका उत्तर हमारा डाक्टरी धधा नहीं दे सकता।' डाक्टर फ्रेकका कहना है कि 'इन दवाखानोके द्वारा हजारों मनुष्योकी हत्या होती है।' डाक्टर मेसन गुड कहते हैं कि 'प्लेग, हैजा, महामारी आदिसे जितने लोग मरते हैं उनसे अ[illegible]क मनुष्य इन दवाओंकी बलि चढते हैं।' यह बात हम जगह जगह देखते हैं कि जहॉ जहॉ वैद्योंकी वृद्धि हु[illegible] है वहाँ वहॉ रोग कम होनेके बदले अधिक अधिक चढे ही हैं। जिन पत्रोंको और और विषयोंके विज्ञापन नहीं मिलते उन्हें दवाओंके बड़े बड़े विज्ञापन सहजमे मिल जाते हैं। इंडियन-ओपिनियनमें जब विज्ञापन लिए जाते थे और उसके सचालक गण जब लोगोंके पास विज्ञापन लेनेको जाते तब दवा बेचनेवाले उसमे दवाओंका विज्ञापन छापनेके लिए बड़ा आग्रह करते [illegible] उसका चार्ज भी भरपूर देनेका लालच दिखलाते। जिस दवाकी कीमत एक पा[illegible] होती है उसका हम एक रुपया देते हैं। यदि ऐसी दवाओंके बना[illegible] हम कोशिश करना चाहें तो उसके बनानेवाले हमें इस बातका पता [illegible] नहीं पड़ने देते कि वह दवा किस तरह बनाई जाती है। 'गुप्त दवाएँ' नामकी एक पुस्तक एक डाक्टरने इस अभिप्रायसे प्रकाशित की है कि [illegible] पढ़ कर लोग भ्रममें न पड़ें। उसमें उन्होंने लिखा है सालसा-परीला, फ्रूट-[illegible] सिरप वगैरह जो पेटेन्ट दवाएँ हैं इनकी कीमत हम लोग सवा दो रुपयेसे लेकर सवा पाँच रुपये तक देते हैं, परन्तु इन दवाओंकी मूल कीमत एक पैसेसे [illegible]

ार पैसे तक होती है। इसे फैला कर देखे तो हम लोग कमसे कम छत्तीस गुणी ौर अधिकसे अधिक तीनसौ छत्तीस गुणी कीमत देते हैं। मतलब यह कि इस ालतमें हम लोग तीन हजार पाँचसौ टकेसे पैंतीस हजार टके तकका नफा देते हैं।

इससे पाठक इतना तो विचार सकेंगे कि रोगीको न तो डाक्टरो या वैद्योके यहाँ दौड़े जानेकी आवश्यकता है और न एकदम दवा लेनेकी, परन्तु दुःख है कि प्रायः लोग इतना धीरज नहीं रखते। साधारण लोग यह नहीं मान सकते कि सब ही डाक्टर अप्रामाणिक—अविश्वासी—होते हैं और सब दवाएँ खराब ही होती हैं। ऐसे लोगोंके लिए इतना कहना आवश्यक जान पडता है कि "जहाँ तक बन पड़े धीरज रक्खो, डाक्टरो या वैद्योंको जहाँ तक हो कष्ट न दो। डाक्टर वगैरहको बुलाना ही आवश्यक जान पड़े तो किसी अच्छे समझदार अनुभवीको बुलाओ और उसीके कहे अनुसार चलो। दूसरे डाक्टर या वैद्योंको तभी बुलाओ जब कि पहला डाक्टर तुम्हें अन्यके बुलानेकी सलाह दे। तुम्हारा रोग तुम्हारे डाक्टरके हाथमें नहीं है, तुम्हारी आयु अधिक होगी तो तुम अवश्य आरोग्य लाभ करोगे और तुम्हारे प्रयत्न करते रहने रहने पर भी यदि तुम्हारी या तुम्हारे सगे-सम्बन्धीकी मौत हो जाय तो समझना कि यह भी एक जिन्दगीका आर-पार ही है।"

इन निबन्धोंके लिखनेका यही कारण है कि पाठक इनमे कहे गये शरीर-रचना, हवा, पानी, खुराक, कसरत, कपडे, पानी और मिट्टीके उपचार, आकस्मिक घटनाएँ, बच्चोंकी सँभाल, गर्भके समय स्त्री-पुरुषोंका कर्तव्य और साधारण रोग आदि विषयोंके सम्बन्धमे खूब विचार और मनन कर उन्हें उपयोगमें लानेका यत्न करें।

अनुवादक—

उदयलाल काशलीवाल।

सुधार।

७९ वें पृष्ठमें 'केनसर' भगंदर किया गया है, पर वह ठीक नहीं है। 'केनसर' गले तथा शरीरके अन्यान्य भागोंमें ऐसे घाव हो जानेको कहते हैं जो भरता नहीं और उसके आसपासका मास सड़ता रहता है और उसमे पीब, रक्त आदि सदा बहता रहता है।

विषय-सूची ।

पहला भाग ।

दूसरा भाग ।

हिन्दी-गौरव-ग्रन्थमाला।

आठ आने प्रवेश-फी देकर स्थायी ग्राहक बननेवालोंको इसकी सब पुस्तकें
नी कीमतमें दी जाती हैं। नीचे लिखी-पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

१ **सफल-गृहस्थ**। अँगरेजीके प्रसिद्ध लेखक सर आथर हेल्सके निबन्धोंका
नुवाद। इसमें मानसिक शान्तिके उपाय, कार्य-कुशलता, कुटुम्ब-शासन, हृदयकी
भीरता, संयम, आदि महत्त्व-पूर्ण विषयोंका बडा सुंदर विवेचन है। कीमत ॥)

२ **आरोग्य-दिग्दर्शन**। मूल लेखक महात्मा गाँधी। पुस्तक प्रत्येक गृहस्थके
लए बडी उपयोगी है। पुस्तकमें हवा, पानी, खुराक, जल-चिकित्सा, मिट्टीके
पचार, छूतके रोग, बच्चोंकी संभाल, सर्प-बिच्छू आदिका काटना, डूबना या
लजाना आदि अनेक विषयों पर विवेचन है। तीसरा सस्करण। मू० ।≈)

३ **कांग्रेसके पिता मि० ह्यूम**। कांग्रेसके जन्मदाता, भारतमें राष्ट्रीय
वोंके उत्पादक, मनुष्य-जातिके परम हितैषी, स्वार्थ-त्यागी महात्मा मि० ह्यूमका
ह जीवन-चरित्र प्रत्येक देशभक्तके पढने योग्य है। मूल्य बारह आने।

४ **जीवनके महत्त्व-पूर्ण प्रश्नों पर प्रकाश**। महात्मा जेम्स एलनकी
स्तकका सरल-सुन्दर अनुवाद। चरित्र-संगठनमें बड़ी उपयोगी पुस्तक है। मू० ॥)

५ **विवेकानन्द (नाटक)**। स्वामी विवेकानन्दने अमेरिका जाकर जो हिन्दू-
र्मका प्रचार किया, उसकी महत्ताका वहाँके लोगो पर प्रकाश डाला, इस विषय-
ा इसमें सुन्दर चित्र खींचा गया है। देश-भक्तिकी पवित्र भावनाओंसे यह नाटक
रा हुआ है। पाँच चित्र दिये हैं। मू० १) रु०

६ **स्वदेशाभिमान**। इसमे कितने ही ऐसे विदेशी रत्न-रत्नोंकी खास खास
टनाओंका उल्लेख है, जिन्होंने अपनी मातृभूमिकी स्वाधीनताकी रक्षाके लिए अपना
र्वस्व बलिदान कर संसारके सामने एक उच्च आदर्श खडा कर दिया है। मूल्य ॥)

७ **स्वराज्यकी योग्यता**। स्वराज्यके विरुद्ध जो आपत्तियाँ उठाई जाती हैं
नका इसमे बड़ी उत्तमताके साथ खण्डन कर इस बातको अच्छी तरह सिद्ध कर
या है कि भारतको स्वराज्य मिलना ही चाहिए। मू० १।) रु०

८ **एकाग्रता और दिव्यशक्ति**। इसमें दिव्यशक्ति—आरोग्य, आनन्द,
क्ति और सफलताकी प्राप्तिके सरल उपाय बतलाये गये हैं। मूल पुस्तककी

लेखिका लिखती है कि "इसके अध्ययनसे तुम्हें दिव्यशक्ति अर्थात् आकर्षणकी अद्भुत शक्ति प्राप्त न हो, यदि तुम अपने भीतर एक नव-प्राप्त आनन्दका अनुभव न करने लगो + + + तो मैं कहती हूँ कि मेरा नाम ओ हण्णु ८९ नहीं।" मूल्य १), साजि० १।≈)

९ **जीवन और श्रम**। परिश्रम करनेसे घबडानेवाले और परिश्रम करनेको बुरा समझनेवाले भारतके लिए यह पुस्तक संजीवनी शक्तिकी दाता है। श्रम ... महत्त्वकी बात है, यह इसे पढनेसे मालूम होगा। मूल्य डेढ़ रुपया। स० १॥

१० **प्रफुल्ल (नाटक)**। महाकवि गिरीशचन्द्र घोषके बंगला ना... हिन्दी अनुवाद। हमारे घरो और समाजमें जो फूट, स्वार्थ, मुकदमेबाजी, ... द्वेष आदि अनेक दोषोंने घुस कर उन्हें नरक धाम बना दिया है उनके ... लिए गिरीश बाबूके सामाजिक नाटकोंका घर घरमें प्रचार होना चाहिए। मूल्य ...

११ **लक्ष्मीबाई (झाँसीकी रानी)**। झाँसीकी रानीकी यह जीव... बडी खोजके साथ लिखी गई है। मूल पुस्तकके सम्बन्धमे सरस्वतीके स... कहना है कि "केवल इसी पुस्तकके लिए मराठी सीखनी चाहिए।" ... महत्त्व-पूर्ण पुस्तक प्रत्येक स्वाभिमानी भारतवासीको पढनी चाहिए। मूल्य १) ...

१२ **पृथ्वीराज (नाटक)**। भारतके सुप्रसिद्ध वीर पृथ्वीराज ने ... गजनीके दुर्दमनीय मुगल-सम्राटको पराजित कर पुण्यभूमि भारतकी रक्षा... लिए जो अपूर्व आत्म बलिदान किया था उसी वीरका वीर-रस-प्रधान चरित्र ... चित्रित किया गया है। मू० ॥॥)

१३ **महात्मा गाँधी**—लेखक, बाबू रामचंद वर्मा। इसका विशेष ... कवरके चौथे पृष्ठ पर देखिए। मू० तीन रुपया।

१४ **वैधव्य कठोर दंड है या शान्ति?** नाट्य-सम्राट् महाकवि गि... चद्र घोषके एक श्रेष्ठ सामाजिक नाटकका अनुवाद। भारतीय आदर्शको ... वाले विधवा-विवाहसे होनेवाली दुर्दशाका बडा ही मार्मिक और हृदयको हि... देनेवाला चित्र इसमे खींचा गया है। मू० ॥।≡), सजि० १।–)

१५ **आत्मविद्या**। वेदान्त विषयका एक अपूर्व और महत्त्व-पूर्ण ग्रंथ लेखक, श्रीयुत पं० माधवराव सप्रे बी० ए०। पृष्ठ सख्या ३५०। मू० २) रु०

आरोग्य-दिग्दर्शन।

पहला भाग।

---

१ आरोग्य।

सर्व-साधारण यह समझते हैं कि मनुष्य खूब खाता-पीता हो, अच्छी तरह चलता-फिरता हो और वैद्य या डाक्टरोंके यहाँ न जाता हो तो वह निरोग है। परन्तु विचार करनेसे जान पड़ेगा कि ऐसा मानना भूल है। अनेक दृष्टान्त ऐसे देख पड़ते हैं कि मनुष्य खाते-पीते और चलते-फिरते हुए भी रोगी होते हैं, पर वे रोगकी परवा न कर मान लेते हैं कि हमें कुछ रोग नहीं है—हम निरोग हैं। सच बात तो यह है कि सर्वथा निरोग मनुष्य इस संसारमें बहुत ही कम मिलेंगे।

एक अँगरेज लेखकका कहना है कि वही मनुष्य निरोग कहा जा सकता है कि जिसके शुद्ध शरीरमें मनकी भी स्थिति शुद्ध हो। मनुष्य केवल शरीरका ही बना नहीं है। शरीर तो उसके रहनेका स्थान है। शरीर मन और इन्द्रियोंका ऐसा गहरा सम्बन्ध है कि एकको व्याधि हुई कि दूसरा भी तुरंत बिगड़ जाता है। शरीरको गुलाबके फूलकी उपमा दी जाती है। गुलाबके फूलका ऊपरी दिखाव शरीर है और सौरभ आत्मा। कागजके बने हुए गुलाबके फूलको कोई पसंद नहीं करता। उसे सूँघनेसे गुलाबकी सुगन्ध नहीं आ सकती। गुलाबकी परीक्षा ही उसकी सुगन्ध है। इसी तरह मनुष्यकी सुगन्ध उसके आत्माका चरित्र है—यह चरित्र ही उसकी परीक्षा है। इसी तरह यदि कोई फूल गुलाबके फूलके समान देख पड़ता

हो, परन्तु बदबू करता हो—उससे दुर्गन्ध आती हो—तो हम उसे फैंक देंगे, उसी तरह मनुष्यका शरीर सुन्दर देख पडता हो और मनुष्य असच्चरित्र हो तो हम उसके शरीर पर मोहित न होंगे। हम कह सकते हैं कि जिस मनुष्यका चरित्र अच्छा नहीं है वह निरोग नहीं कहा जा सकता। शरीर और आत्माका ऐसा दृढ सम्बन्ध है कि जिसका शरीर अच्छा होगा उसका मन भी शुद्ध होगा। इसी सिद्धान्तके आधार पर योरपमें एक सम्प्रदाय चला है। उसका मानना है कि जिसका मन शुद्ध है उसे कोई रोग ही नहीं होता और जो बीमार हैं वह भी मनको शुद्ध करके शरीरसे निरोग हो सकता है। यह मत ग्रहण करने योग्य और सत्य है। परन्तु पश्चिमीय सुधारक इस मतका दुरुपयोग करते हैं। हमें सिर्फ इसमेसे इतना सार मात्र ग्रहण कर लेना चाहिए कि आरोग्य सम्पादन करनेका प्रधान साधन मन है और मनकी शुद्धि आरोग्यको सुरक्षित रखनेकी मुख्य वस्तु है।

यह मनुष्य क्रोधी है, इसकी प्रकृति तामस है, वह आलसी है, वह बहरा है, सच पूछो तो ये सारे रोगके चिह्न है। कितने ही डाक्टरोंका तो कहना है कि चोरी आदि दुर्गुण भी एक प्रकारकी बीमारियाँ हैं। विलायतमें कितनी ही धनाढ्य स्त्रियाँ दूकानों परसे कुछ चीजोंको चुरा लेती है। वहाँके डाक्टर इसे 'क्लेप्टे मेनिया' नामकी बीमारी बतल[illegible] है। कितने ही मनुष्य ऐसे होते है कि जब तक वे मारकाट न करें [illegible] तक उन्हें चैन ही नहीं पडता। यह भी रोग ही है।

इस प्रकार विचार करने पर हम उसी मनुष्यको निरोग—तन्दुरुस्त—कह सकते है कि जिसके शरीरमें किसी प्रकारकी कमी [illegible] है—जिसका शरीर अखंड है, दाँत ठीक हैं, आँख-कान दुरुस्त हैं, [illegible] नहीं बहता, जिसकी त्वचासे पसीना निकलता है, किन्तु बदबू न[illegible] मारता, जिसके पैर गंदे नहीं है, मुँह नहीं सड़ता, हाथ-पैर [illegible]

तौर पर काम कर सकते है, जो विषयासक्त नही है, जो न बहुत मोटा है और न बहुत दुबला; और मन तथा इन्द्रियाँ जिसके सदा अधीन बनी रहती हैं। ऐसा आरोग्य सम्पादन करना और उसकी रक्षा करना सहज नहीं है। हम ऐसे आरोग्यका उपभोग नहीं कर रहे हैं, क्योंकि हमारे माता-पिता भी उसका उपभोग नहीं करते थे। एक प्रसिद्ध लेखकने लिखा है कि यदि माता-पिता सब प्रकारसे योग्य हों तो उनकी सन्तति उनसे भी बढकर होनी चाहिए। यदि यह बात ठीक न हो तो इस विचारके माननेवालोंको अपने विचार छोड़ देने पड़ेंगे कि दुनिया उन्नति कर रही है। जो मनुष्य पूर्ण निरोग है उसे मौतका कोई भय नहीं होता। हम जो मौतसे डरते है, यही डर तो इस बातको बतलाता है कि हम निरोग नहीं है। मौत तो हमारे जीवनका एक बड़ा भारी परिवर्तन है, और सृष्टि-नियमके अनुकूल वह परिवर्तन उत्तम ही होना चाहिए। ऐसे उत्तम आरोग्यको सम्पादन करनेके लिए प्रयत्न करना हमारा कर्तव्य है। हम आगे चल कर इस बात पर विचार करेंगे कि ऐसा आरोग्य कैसे प्राप्त किया जा सकता है और कैसे उसकी रक्षा हो सकती है।

---

२ हमारा शरीर।

पृथ्वी पानी पवन त्यों, तेज और आकास।
हैं पाँचों ही तत्त्व ये, इनका जगत विकास॥

बहुत करके शरीरका वर्णन इस दोहेमें आ जाता है। पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश इन पाँचों तत्त्वोंको मिला कर जो खेल प्रकृतिने और प्रकृतिके कर्ताने किया है उसे हम जगत्के नामसे जानते है। जिन वस्तुओंसे जगत् बना है उन्हींसे यह मिट्टीका पुतला—जिसे हम शरीर कहते है—बना है। एक कहावत है कि 'यथा पिंडे तथा

ब्रह्माण्डे’। यदि हम इसे अच्छी तरह समझ लें तो हमारे ध्यानमें यह आये बिना न रहेगा कि शरीरको सुरक्षित रखनेके लिए स्वच्छ मिट्टी, स्वच्छ जल, स्वच्छ (खुला) आकाश, स्वच्छ तेज (सूर्य) और स्वच्छ वायु आवश्यक है। इनमेंसे हमें किसी तत्त्वसे नहीं डरना चाहिए। वास्तवमें देखा जाय तो इनमेंसे जिस तत्त्वकी हममें कमी होगी और जिस परिमाणमें होगी उतना ही रोग होगा। शरीरके विषयमें इतने ही जाननेकी आवश्यकता है, परन्तु हमारे प्रतिपाद्य विषयके लिए इतना ही जान लेना पूर्ण नहीं है।

शरीर हाड, मांस, त्वचा और रुधिरसे बना है। शरीरका मुख्य आधार हाड-पिंजर पर है। इसीके आधारसे हम खडे हो सकते हैं और चल-फिर सकते है। हड्डियाँ शरीरके कोमल अवयवोंकी रक्षा करती है। खोपडी दिमागकी रक्षा करती है और पसलियाँ हृदय और फैफडोंकी। डाक्टरोंकी गिनतीके अनुसार हमारे शरीरमें २३८ हड्डियाँ है। हड्डियोंका बाहरी भाग कठिन होता है, इस बातको हम सब देख सकते है। परन्तु भीतरी भागकी ऐसी स्थिति नहीं है। वह पोला और नरम होता है। एक हड्डी दूसरी हड्डीसे जुडी हुई रहती है। जोड़की जगह मज्जाका आवरण होता है। इस मज्जाको एक तरहकी नरम हड्डी ही कहना चाहिए।

हमारे दाँत भी हड्डियाँ ही है। बचपनमें जो दाँत आते है वे दूधके दाँत कहलाते हैं। वे सब गिर जाते है। इसके बाद दूसरे दाँत आते है। इनके गिर जाने पर फिर दाँत नहीं आते। बालकके दूधके दात छःसे आठ महीनेकी अवस्थामें निकलने लगते है और बच्चा जब तक दो अढाई वर्षका होता है तब तक निकल चुकते है। दूसरे दाँत पाँच वर्षके बाद निकलने लगते हैं और १७ से २५ वर्षकी अवस्था तक निकल चुकते हैं। दाढें सब दाँतोंके बाद निकलती है।

त्वचाको स्पर्श करनेसे हमें कई जगह मांस-पिंडसे जान पड़ते है। ये स्नायु कहलाती हैं। हमारे ज्ञान-तन्तु इनसे काम लेते हैं। हम मुट्ठी बाँध सकते हैं और खोल सकते हैं, आँखें टिमटिमा सकते हैं और जबड़ोंको हिला सकते है, यह सब स्नायुओंके आधार पर होता है।

शरीर-सम्बन्धी सारी बातोंका परिचय देना इन प्रकरणोंकी मर्यादाके बाहर है और न लेखकको ही उनका पूर्ण ज्ञान है। यहाँ पर मतलबके लिए जितना आवश्यक है उतना ही परिचय दिया जायगा। अर्थात् इन बातोंके बाद अब हम शरीरके मुख्य मुख्य भागोंका वर्णन करते है। इन मुख्य भागोंमें कोठा सबसे बढकर है। यदि क्षण भरके लिए भी कोठा आलसी बन जाय—अपना काम करना छोड दे—तो हमारी रग रग ढीली पढ़ जाय। जितना भार हम कोठे पर डालते हैं उतना भार सहन करनेकी शक्ति बड़े बड़े प्राणियोंमें भी नहीं होती। कोठेका काम अन्नको पचाने और पचे हुए अन्नके द्वारा शरीर-पोषण करनेका है। यंत्रको चलानेके लिए जैसे इंजिन होता है वैसे ही मनुष्यके लिए कोठा है। यह बायीं ओर पसलियोंके बीचमें है। इसमें अनेक क्रियाओं द्वारा अलग अलग रस तैयार होकर अन्नमेंका तत्त्व खींचा जाता है और निस्सार भाग मल-मूत्र बन कर अँतड़ियोंके द्वारा बाहर निकल जाता है। इसके ऊपरकी ओर कलेजेका वाम भाग है। कोठेकी बायीं ओर तिल्ली है। पसलियोंके भीतर दायें भागमें कलेजा है। खूनको साफ करना और पित्तको पैदा करना कलेजका काम है। यह पित्त पाचन-क्रियाके उपयोगमें आता है।

पसलियोंके नीचे—सीनेकी पोलाईमें—अन्तःकरण, रक्ताशय और फैफड़े है। अन्तःकरणकी थैली दोनों फैंफड़ोंके बीचमें बायीं ओर है। सीनेमें बायीं ओर दायीं ओरकी मिल कर सब २४ हड्डियाँ है। पाँचवीं और छठी पसलीके बीचमें अन्तःकरणका धबकारा होता है। हमारे बायें और दायें फैंफडे साँस लेनेकी नळीसे जुड़े हुए हैं। उनमें हवा भरी जाकर

खून साफ होता है। फैंफड़ोंमें श्वासकी नलीके द्वारा हवा जाती है। यह हवा नाकके द्वारा जानी चाहिए। नाकके द्वारा जो हवा जाती है वह गरम होकर फैफड़ोंमें पहुँचती है। बहुतसे मनुष्य इस बातको न जान कर मुँहके द्वारा हवाको भीतर पहुँचाते हैं और हानि उठाते हैं। मुँह खाने-पीनेके कामका है, साँस लेनेके कामका नहीं। अत एव हवा नाकके रास्तेसे ही जानी चाहिए।

ऊपरके वर्णनसे हमें शरीरकी रचना और उसके मुख्य भागका कुछ कुछ ज्ञान हो गया। अब हमें प्रवाही रक्तके विषयमें भी कुछ ज्ञान सम्पादन करना आवश्यक है, जिस पर कि सारे देहका आधार है। रक्त हमारे शरीरका पोषण करता है और वह खूराकमेंसे पोषण करनेवाले भागको अलहदा करता है। निरुपयोगी वस्तुको—मल-मूत्रको—बाहर निकालता है और शरीरको एकसा गरम रखता है। रक्त शरीरकी नलियों—नसों—द्वारा सदा फिरता रहता है। हमारी नाडियाँ रक्तकी गतिके कारण ही चलती हैं। जवान और निरोग मनुष्यकी नाड़ी एक मिनिटमें लगभग ७५ बार चलती है। बच्चोंकी नाडी जल्दी चलती है और बूढोंकी भी जल्दी चलती है।

रक्तको शुद्ध करनेका सबसे बड़ा साधन हवा है। शरीरमें चक्कर लगा कर जो रक्त फैफड़ोंमें जाता है वह निकम्मा हो जाता है और उसमें विषैले पदार्थ होते है। साँस द्वारा जो हवा फैंफडोंमें जाती है वह इन विषैले पदार्थोंको ग्रहण कर लेती है और अपनेमें रहनेवाले प्राण-तत्त्वको रक्तमें छोड़ देती है। यह क्रिया सदा होती ही रहती है। रक्तके विषैले पदार्थको लेकर भीतर गई हुई हवा उच्छ्वासके द्वारा बाहर आ जाती है। रक्तमें जो प्राण-तत्त्व मिलता है वह रक्तके साथ सारे शरीरमें फैल जाता है। इससे ध्यानमें आ सकता है कि उच्छ्वासके द्वारा निकली हुई हवा कैसी विषैली होती है। हवाका हमारे शरीर पर इतना ज्यादा प्रभाव पड़ता है कि उसका विचार हम अगलेमें प्रकरणमें करेंगे।

---

३ हवा।

हवा और शरीरकी रचनाका जो कुछ विवेचन ऊपर किया जा चुका है। उससे यह जान पड़ता है कि शरीरको तीन प्रकारकी खूराककी आवश्यकता है। हवा, पानी और अन्न। इनमें सबसे ज्यादा आवश्यक वस्तु हवा है। प्रकृतिने हवा इतनी ज्यादा रक्खी है कि वह हमें मुफ्त मिलती है। इतना होने पर भी वर्तमान समयके सुधारने हवाको बहुमूल्य कर दिया है। वर्तमान समयमें हमें हवाके लिए दूर दूरके देशोंमें जाना पड़ता है और दूर जानेमें पैसे खर्च होते है। बबईके रहनेवालोंको माथेरनमें हवा खानेके लिए मिले तो उनकी प्रकृति सुधरती है और बबईमें वे मलाबार हिल पर रह सकें तो उन्हें अच्छी हवा मिल सकती है। परन्तु ऐसा करनेके लिए टके चाहिए। डरवनमें रहनेवालेको अच्छी हवा प्राप्त करना हो तो उसे बेरियाको जाना चाहिए। ये सब बातें बिना पैसेके पूर्ण नहीं की जा सकतीं। अत एव आजकलके जमानेमें यह कहना सर्वथा उचित नहीं गिना जा सकता कि हवा बिना मूल्य मिलती है।

हवा बिना मोल मिले या मोलसे, परन्तु इसके बिना हम घड़ी भर भी निर्वाह नहीं कर सकते। हम कह चुके हैं कि रक्त सारे शरीरमें फिरता है। वह फैफड़ोंमें आकर स्वच्छ होता है और पीछा फिरता है। यह क्रिया हमारे शरीरमें दिन-रात होती रहती है। साँस बाहर निकाल कर हम विषैली हवाको बाहर निकालते हैं और साँस लेकर हम बाहरकी हवाके प्राण-वायुको भीतर पहुँचाते है और उसके द्वारा रक्तको स्वच्छ करते है। यह श्वासोच्छ्वास चलता रहता है और इसी पर शरीरकी जिन्दगीका आधार है। मनुष्य पानीमें डूब कर मर जाता है, इसका अर्थ इतना ही है कि वह प्राण-वायुको शरीरमें नहीं पहुँचा सकता और भीतरी विषैली हवाको बाहर नहीं निकाल सकता। डुबकी लगानेवाले बख्तर पहन कर पानीमें उतर जाते हैं। उन्हें पानीके बाहर निकली हुई नलीके

द्वारा बाहरकी हवा पहुँचती रहती है। इससे वे बहुत समय तक पानीमें रह सकते हैं।

कितने ही वैद्योंके प्रयोगोंसे साबित हुआ है कि यदि मनुष्यको हवाके बिना रक्खा जावे तो पाँच मिनिटमें उसके प्राण निकल जायँगे। कितनी ही बार माँकी रजाईमें लिपटा हुआ बच्चा दम घुट जानेके कारण मर जाता है। यह मृत्यु बालकके नाक और मुँहके बंद हो जानेके कारण बाहरकी हवा न मिलनेसे होती है।

इन बातोंसे हम समझ सकते है कि हवा हमारी सबसे आवश्यक खूराक है और वह हमें बिना माँगे मिलती है। पानी और अन्न हमें माँगने और तलाश करनेसे मिलते है, परन्तु हवा तो हमें इच्छा किये बिना भी मिलती रहती है।

जैसे हम खराब पानी और खराब अन्न ग्रहण करते हुए हिच-किचाते है वैसे ही हमें हवाके सम्बन्धमें भी ध्यान रखना चाहिए। परन्तु हम जितना खराब अन्न-जल ग्रहण नहीं करते उतनी खराब हवा गृहण करते हैं। इसका कारण यह है कि हम मूर्तिमान् वस्तुको ही देखते हैं। हवा आँखोंसे नहीं देख पडती, इस लिए हम इस बातका विचार नहीं कर पाते कि हम कितनी खराब हवा ग्रहण करते हैं। दूसरोंके जूठे अन्न-जलको हम न खाते और न पीते हैं; और हमें उससे घृणा न भी हो तो भी ऐसे अन्न-जलको हम कभी ग्रहण न करेंगे। अकालके मारे हुए मनुष्यके सामने भी ऐसी खूराक रक्खी जाय तो वह मरना पसन्द करेगा, पर उस खूराकको कभी ग्रहण न करेगा। परन्तु दूसरोंकी कै की हुई—उच्छ्वासके द्वारा बाहर निकाली हुई—हवाको हम सब, बिना किसी प्रकारकी घृणाके ग्रहण करते रहते है। आरोग्य शास्त्रके नियमानुसार यह हवा भी उस अन्न-जलके समान खराब ही है। ऐसा सिद्ध किया गया है कि एक मनुष्यका उच्छ्वास दूसरे मनुष्यके फैफड़ेमें प्रविष्ट कर दिया जाय

तो उस दूसरे मनुष्यका तुरंत ही मरण हो जायगा। उच्छ्वासके इतने विषैले होने पर भी उसे एक कोठरीमें ठसाठस बैठे हुए या सोते हुए मनुष्य ग्रहण करते रहते है। मनुष्यका सौभाग्य है कि हवा ऐसी चंचल वस्तु है कि वह सदा चलती रहती है और सब ठौर फैल जाती है। इतना ही नहीं, बारीकसे बारीक छिद्रोंमेंसे वह प्रविष्ट हो जाती है। एक ओर कोठड़ीमें इकट्ठे होकर हम हवाको खराब करते है और दूसरी ओर दरवाजोंकी सन्धियों और छप्परके छिद्रोंमेंसे जो थोड़ी बहुत बाहरकी हवा आती रहती है उससे हम बिलकुल उच्छ्वासकी ही हवाको पीछी ग्रहण नहीं करते, पर हमारी बाहर निकाली हुई हवा भी निरंतर शुद्ध होती रहती है। खुली हवामें हम उच्छ्वास लेते है तो वह क्षण भरमें बाहरकी हवामें फैल जाती है और उत्तम हवाकी जो मिकदार (परिणाम) है उसे कुदरत रख लेती है। हवा बहुत बड़े विस्तारमें इस छोटीसी पृथ्वीके चारों ओर फैली हुई है।

अब हम समझ सकते हैं कि बहुतसे मनुष्य निर्बल और बीमार क्यों रहा करते हैं। जहाँ तक देखा गया है सौमें निन्यानवेकी बीमारीका कारण खराब हवा है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। क्षय, बुखार और अनेक प्रकारके जो छूतके रोग हैं उन सबका कारण हमारी ग्रहण की हुई खराब हवा है। अत एव इन रोगोंको दूर करनेका पहला और अन्तिम सहज उपाय यही है कि हम अच्छीसे अच्छी हवाको ग्रहण करें। इस उपायको दुनिया भरमें कोई वैद्य, डाक्टर या हकीम नहीं पहुँच सकता। क्षय-रोग फैफड़े सडनेकी निशानी है और फैंफड़ा सडता है विषैली हवासे। जैसे इंजनमें खराब कोयले भरनेसे वह खराब हो जाता है वैसे ही खराब हवाके भरनेसे फैंफडे खराब हो जाते हैं। इस कारण समझदार डाक्टर क्षयके रोगीको चौबीसों घंटे खुली हवामें रखनेका पहला उपाय करते हैं; अन्यान्य उपाय वे इसके बाद करते हैं।

फैंफड़ोंके द्वारा हम हवाको ग्रहण करते हैं, इतना ही नहीं, कुछ कुछ त्वचाके द्वारा भी उसे ग्रहण करते हैं—त्वचामें जो असंख्य सूक्ष्म छिद्र हैं उनके द्वारा हम हवाको ग्रहण करते हैं। अत एव इस बातको जानना प्रत्येक मनुष्यका काम है कि इतनी भारी आवश्यक वस्तु हवा कैसे स्वच्छ रक्खी जा सकती है। वास्तवमें तो ऐसा होना चाहिए कि जबसे बच्चा कुछ समझदार होने लगे तभीसे उसे हवाकी आवश्यकताका ज्ञान करा देना चाहिए। इन प्रकरणोंके पढनेवाले इस सहज, परन्तु अत्यन्त आवश्यक कामको करनेका प्रयत्न करेंगे और स्वयं हवाके सम्बन्धनमें सामान्य ज्ञान सम्पादन कर उसके अनुसार चलने हुए, अपने बाल-बच्चोंको भी सब बातें समझा कर उसी भाँति चलानेका यत्न करेंगे तो मैं अपनेको कृतार्थ समझूँगा।

हमारे पाखाने, हमारे बाड़े और ऐसे पैशाब करनेके स्थान जहाँ पैशाब-घर न हों, ये हवा खराब होनेके प्रधान साधन हैं। बहुत ही कम मनुष्य ऐसे है जिन्हें पाखानेकी गंदगीसे होते हुए नुकसानका भान हो। कुत्ते-बिल्ली जब पाखाना फिरते है तब बहुत करके वे अपने पंजोंसे जमीनको खोदते है और उस गढ़ेमें मल त्याग कर उस पर धूल पूर देते हैं। जहाँ पर सुधरे हुए ढंगके पानीके नलवाळे पाखाने नही है वहाँ पर ऊपरकी भाँति क्रिया करनेकी जरूरत है। हमें अपने पाखानोंमें एक हौज राख या सूखी मिट्टीसे भर रखना चाहिए, और जब जब हम पाखाने जावें तब तब हमें मैलेको राख या सूखी मिट्टीसे अच्छी तरह पूर देना चाहिए। ऐसा करनेसे बदबू नहीं फैलती और मक्खी-मच्छर वगैरह उडनेवाले जीव-जन्तु मैले पर बैठ कर हमारे शरीरको नहीं छू सकते। जिनके नाक खराब नहीं है या जिन्हें मैलेकी दुर्गंध सहनेकी आदत नहीं हो गई है वे अच्छी तरह जान सकते हैं कि मैला खुला रखनेसे हवामें कैसी बदबू फैलती है। हमारे खानेमें अगर कोई मैला मिला कर हमारे सामने

रख दे तो हमें कै हो जायगी, परंतु हम मैलेकी बदबूसे भरी हुई हवाको श्वासके द्वारा खाते रहते हैं। सच वात तो यह है कि ऐसी हवा और मैला मिले हुए खानेमें कुछ फर्क नहीं है। हाँ, फर्क है तो इतना ही कि मैला मिले हुए खानेको हम आँखसे देख सकते है और हवामें मिले हुए मैलेको नहीं देख सकते। पाखानेकी बैठक—मोरी वगैरह—बिलकुल साफ रखनी चाहिए। अफसोस है कि ऐसा काम करनेसे हम शर्माते है, घृणा करते हैं, परन्तु वास्तवमें देखा जाय तो हमें वैसे पाखाने काममें लेनेसे घृणा होनी चाहिए। जो मैला हमारे शरीरसे निकलता है उसे हम दूसरे मनुष्योंके द्वारा उठवाते है, ऐसा न कर हमें स्वयं क्यों न अपना मैला साफ करना चाहिए! ऐसा करना कुछ बुरा नहीं है। यह वात स्वयं हमें सीख कर अपने बच्चोंको सिखानी चाहिए। मोरी जब भर जावे तब मल-को हाथ आधे-हाथके गहरे गढेमें गाढ़ कर ऊपरसे खूब धूल पूर देनी चाहिए। यदि हमे जंगलमें पाखाने जानेकी आदत हो तो मकानोंसे बहुत दूर अच्छी जगहमें जाना चाहिए। वहाँ हाथसे एक छोटा-सा गढा खोद कर मल त्याग करना चाहिए और खोदी हुई मिट्टी उस पर पूर देनी चाहिए। जहाँ तहाँ पेशाब करके भी हम हवाको खराब करते है। इस आदतको बिलकुल छोड देनी चाहिए। जहाँ पर पेशाव घर न हों वहाँ पर घरोंसे दूर जाकर सूखी जमीनमें पेशाब करना चाहिए और उस पर धूल डाल देनी चाहिए। मलको ज्यादा गहराईमें नहीं गाडनेके दो प्रबल कारण हैं। एक तो यह कि मल गहाराईमें गाढ़नेसे उस पर सूर्यकी गर्मी काम नहीं कर सकती और दूसरे उसके आस-पासके पानीके झरोंको हानि पहुँचना संभव है।

बिना विचारे जहाँ तहाँ थूँक देना भी अच्छा नहीं है। कई वार थूँक जहरीला होता है। क्षयके रोगीका थूँक बहुत ही जहरीला होता है; उसके जंतु उढ़ कर श्वास द्वारा दूसरोंमें प्रवेश कर जाते हैं और उन्हें-

नुकसान पहुँचाते है। जहाँ तहाँ थूक देनेसे वे स्थान खराब होते हैं यह तो बात ही दूसरी है। इस विषयमें हमारा कर्तव्य यह है कि हमें घरोंके भीतर तो जहाँ तहाँ थूकना ही न चाहिए। एक पीकदानी रखनी चाहिए—फिर वह मिट्टीकी कुलिया ही क्यों न हो। और यदि रास्ते चलते हुए थूकनेकी जरूरत जान पडे तो ऐसी जगह थूकना चाहिए जहाँ पर सूखी जमीनमें खूब धूल हो। ऐसा करनेसे थूक सूखी मिट्टीमें मिल जायगा और कम हानि पहुँचावेगा। कितने ही वैद्योंकी तो सम्मति यह है कि क्षयके रोगियोंको तो ऐसे बर्तनोंमें थूकना चाहिए जिनमें जन्तु नाशक दवा डाली गई हो, क्योंकि ऐसे बीमारके थूकके जतु सूखी जमीनकी धूलमें मर नही जाते। वह धल उड कर हवामें जाती है और उन जन्तुओंको फैलाती है। यह बात सही हो या न हो, परन्तु इससे हम इतना तो समझ सकते हैं कि जहाँ तहाँ थूकनेकी आदत गंदी और नुकसान करनेवाली है।

सड़ा अनाज, तुस और शाककी पत्तियोंको कई लोग यों ही इधर उधर फैंक देते है। यदि उन्हें वे जमीनमें थोडीसी गहरी गाड़ दें तो हवा खराब न हो और समय पाकर उपयोगी खाद तैयार हो जाय। सड़नेवाली कोई भी चीज खुली हवामें न फेंकना चाहिए। हर एक मनुष्य अपने अनुभवसे समझ सकेगा कि समझे बाद इन सूचनाओं पर चलना बिलकुल आसान है।

यह बात हम जान चुके कि हमारी कुटेवोंसे हवा कैसे खराब होती है और उसे खराब होनेसे कैसे बचाया जा सकता है। अब हम इस बात पर विचार करते हैं कि हवा कैसे ग्रहण की जाय।

हम पहले प्रकरणमें लिख आये हैं कि हवा ग्रहण करनेका मार्ग नाक है, मुँह नहीं। इतने पर भी बहुत ही कम ऐसे मनुष्य हैं जिन्हें श्वास लेना आता हो। बहुतसे लोग मुँहसे श्वास लेते हुए भी देखे जाते हैं। यह

व नुकसान करती है। बहुत ठंडी हवा जो मुँहसे ग्रहण की जाय तो प्रायः सरदी हो जाती है, स्वर बैठ जाता है, हवाके साथ धूलके कण श्वास लेनेवालेके फेफडोंमें घुस जाते हैं और फेफड़ोंको बहुत नुकसान पहुँचाते हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव विलायतके शहरोंमें तुरंत पडता है। वहाँ पर बहुतसे कल-कारखानोंके कारण नवम्बर मासमें बहुत ही फौग—पीली धूमस—होती है। उसमें बारीक बारीक काले धूलके कण होते हैं। जो मनुष्य इस धूलके कण-भरी हवाको मुँहसे ग्रहण करते हैं उनके थूकमें धूल देख पड़ने लगती है। ऐसा अनर्थ न होनेके लिए बहुतसी स्त्रियाँ—जिन्हें नाकसे श्वास लेनेकी आदत नहीं होती—चेहरे पर जाली बाँधे रहती हैं, यह जाली चलनीका काम देती है। इसमें होकर जो हवा जाती है वह साफ जाती है। इस जालीको उतार कर देखनेसे उसमें धूलके कण दिखाई पडते हैं। ऐसी ही चलनी परमात्माने हमारे नाकमें रक्खी है। नाकसे ग्रहण की हुई हवा गरम होकर भीतर जाती है। इस बातको ध्यानमें रख कर प्रत्येक मनुष्यको नाकके द्वारा ही हवा लेना सीखना चाहिए। यह कुछ कठिन नहीं है। जिस समय हम बोल न रहे हों या किसीसे बातचीत न कर रहे हों उस समय हमें मुँह बंद रखना चाहिए। जिन्हें मुँह खुला रखनेकी आदत पड गई हो उन्हे मुँह पर पट्टी बाँध कर रातमें सोना चाहिए। इससे लाचार होकर उन्हें नाकसे ही श्वास लेना पडेगा। प्रातःकाल खुली हवामें भी उन्हें २०—२२ बार लम्बी गहरी साँसें नाकके द्वारा लेनी चाहिए। तन्दुरुस्त और नाकसे श्वास लेनेवाला आदमी भी प्रातःकाल गहरी साँसें लेनेका अभ्यास करेगा तो उसका सीना मजबूत और चौड़ा होगा। यह बात सबके आजमाने लायक है; इसे आजमानेवालेको चाहिए कि वह पहले अपने सीनेको नाप ले और फिर एक महीने तक इस क्रियाको करके नापे। उसे जान पडेगा कि- तनेसे थोड़े समयमें भी उसका सीना कुछ बढ गया है। सेण्डो वगैरह

डम्बलकी जो कसरत करते है उसमें भी यही रहस्य है। झपाटेके साथ डम्बल फिरानेसे खूब गहरे श्वास लेने पड़ते हैं और इससे खूब सीना मजबूत और चौडा होता है।

इस प्रकार हवाके लेनेकी रीति जान लेनेके बाद रात-दिन साँस द्वारा खुली हवा लेनेकी आदत डालना आवश्यक है। हम लोगोंकी यह साधारण आदत सी पड़ गई है कि दिनमें तो हम घरमें या दूकानमें रुके रहते है और रातमें जब सोते हैं तब तिजोरीके जैसी बंद कोठडीमें सो जाते हैं और खिडकी दरवाजे हों तो उन्हें भी बन्द कर लेते है। यह आदत बड़ी निन्दनीय है। जितने समय तक हो सके उतने समय तक—खास कर सोते समय—खुली हवा ही हमें लेनी चाहिए। हो सके तो खुले बराडे, चाँदनी या मैदानमें सोना चाहिए। जिन्हें ऐसा सुभीता न हो उन्हें चाहिए कि जितने दरवाजे और खिडकियाँ खुली रक्खी जा सकें उन्हें खोल रखनी चाहिए। हवा हमारी चौवीसों घंटे खानेकी खूराक है। इससे भय खानेकी कोई बात नहीं है। ऐसा बहम कभी न करना चाहिए कि खुली हवासे या प्रातःकालकी हवासे बीमारी पैदा हो जायगी। जिन्होंने कुटेवसे अपने फेंफड़ोंको बिगाड़ लिया है उन्हें खुली हवामें सरदी हो जाना संभव है, परन्तु वैसे मनुष्योंको भी ऐसी सरदीसे नहीं डरना चाहिए। यह सरदी थोड़ेसे अर्सेमें दूर हो जायगी। क्षयके रोगियोंके लिए अब योरपमें जगह जगह खुली हवाके मकान बनाये गये हैं देशमें जो महामारीका उपद्रव रहा करता है, इसका खास कारण हमारी हवा बिगाडने और बिगड़ी हुई हवाके ग्रहण करनेकी बुरी आदत है। इस बातको अच्छी तरह ध्यानमें रखना चाहिए कि नाजुकसे नाजुक मनुष्यको ... खुली हवाके ग्रहण करनेसे लाभ ही होगा। अगर हम हवाको ... न होने दें और साफ हवाको लेना सीख लें तो बहुतसे रोगोंसे सहजमें ही बच जावें और हम पर गदे रहनेका जो दोष लगाया जाता है कई अंशोंमें दूर हो जाये।

जैसे खुली हवामें सोना जरूरी है वैसे ही मुंह न ढक कर सोना भी आवश्यक है। बहुतसे लोगोंकी ऐसी टेव होती है कि वे मुंह ढक कर सोते है। ऐसा करनेसे हम अपनी निकली हुई विषैली हवाको वापस ग्रहण करते है। हवा एक ऐसी वस्तु है जो थोडा भी मार्ग मिल जाने पर भीतर घुस जाती है। हमारा ओढना कैसा ही लिपटा हुआ क्यों न हो उसमें होकर थोड़ी बहुत हवा घुस ही जाती है। यदि ऐसा न होता हो तो मुंह ढक कर सोनेवाला घुट कर ही मर जायगा। परन्तु वैसा नहीं होता। इसका कारण यही है कि थोड़ा बहुत बाहरका प्राण-वायु हमें मिल जाता है। परन्तु इतनी थोडी हवा पर्याप्त नहीं है। सिरको ठंड लगती हो तो कुछ ओढ लेना चाहिए या टोपी पहन लेनी चाहिए, परन्तु नाक तो उस दशामें भी खुली ही रखनी चाहिए। कितनी ही ठंड क्यों न पड़ती हो, नाकको खुली रख कर ही सोना चाहिए।

हवा और उजेलेका इतना निकटका सम्बन्ध है कि उजलेके विषयमें दो बातें इस प्रकरणमें लिखना आवश्यक जान पड़ता है। जैसे हम हवाके बिना नहीं रह सकते, वैसे ही उजेलेके बिना भी जीते नहीं रह सकते। नरकमें जो हवा खराब होती है, वह इस लिए कि वहाँ उजेलेका अभाव है। जहाँ प्रकाश नहीं होता वहाँकी हवा खराब होती है। यदि हम किसी अँधेरी कोठडीमें घुसें तो वहाँकी हवामें हमें बदबू आवेगी। अँधेरेमें जो हमें देख नहीं पड़ता, यही इस बातको प्रकट करता है कि हम उजेलेमें रहनेके लिए पैदा हुए हैं। जितने अँधेरेकी हमें आवश्यकता है परमेश्वरने उतने अँधेरेवाली सुखदायी रात हमारे लिए बना दी है। कई आदमियोंकी ऐसी आदत होती है कि वे अतिशय गरमीके दिनोंमें भी अपने अँधेरे तैग्वानोंमें खिडकी-दरवाजे बन्द करके सो रहते है। याद रखना चाहिए कि हवा और उजेलेमें न रहनेवाले मनुष्य निर्बल और तेजोहीन हो जाते है।

योरपमें इन दिनों ऐसे डाक्टर है जो बीमारोंको खुली हवा और प्रकाशसे आराम पहुँचाते हैं । वे चेहरे पर ही हवा और प्रकाश नहीं पहुँचाते, सारे शरीरकी त्वचा पर उसका प्रयोग करते हैं । बीमारको वे लगभग नंगा रखते है। ऐसे इलाजसे सैकड़ों बीमार अच्छे होते देखे जाते हैं । हमें अपने घरोंके सब खिड़की-दरवाजे हवा और उजेलेके आने-जानेके लिए खुले रखने चाहिए ।

इसे पढ कर बहुतसे लोग शंका करेंगे कि जो हवा और उजेलेकी इतनी आवश्यकता ही होती तो उन मनुष्योंको नुकसान क्यों नहीं होता जो अपनी कोठड़ियोंमें पड़े रहते हैं ? मालूम होता है ऐसी शंका करनेवालोंने इस बात पर विचार ही नहीं किया कि हमारा काम जैसे-तैसे जिन्दगीको बिताना ही नहीं है, किंतु पूर्ण आरोग्यसे रहना है । यह बात अच्छी तरह सिद्ध की गई है कि जहाँ जहाँ लोग कम हवा और उजेलेमें निर्वाह करते है वहाँ वहाँ वे बीमार रहते हैं । गाँवके लोगोसे शहरके लोग नाजुक रहते है; क्योंकि उन्हें हवा और उजेला कम मिलता है । डरबनमें हम लोगोंको खाँसी आदि रोग बहुत होते हैं, इसका कारण सरकारी डाक्टरने अपनी रिपोर्टमें यह लिखा है कि हमें अच्छी हवा नहीं मिलती या हम उसे लेते नहीं है । हवा और उजेला आरोग्यके लिए ऐसा आवश्यक है कि प्रत्येक मनुष्यको इनके विषयमें अच्छी तरह जानकारी होनी चाहिए ।

---

४ पानी ।

जिस भाँति गत प्रकरणमें बतलाया गया है कि हवा खूराक है उसी भाँति पानीको भी खूराक समझना चाहिए । हवा पहले दर्जेकी खूराक है और पानी दूसरे दर्जेकी । हवाके बिना आदमी कुछ मिनट ही जी सकता है, परन्तु पानीके बिना कई घंटे और देश-काल अनुसार कई दिन भी रह सकता है । इतना होने पर भी यह व

निश्चित है कि अन्यान्य खूराकके विना तो मुद्दत तक रहा जा सकता है; परन्तु पानीके विना नहीं रहा जा सकता । पानी यदि बरावर मिलता रहे तो मनुष्य कई दिन विना अन्नके ही निकाल सकता है। हमारे शरीरमें $\frac{७०}{१००}$ से अधिक अंश जलका है। पानीके विना शरीरका वजन ८ रतलसे लेकर १२ रतल तक गिना जाता है। हमारी सारी खूराकोंमें थोडा वहुत पानी रहता ही है ।

पानी हमारी वडी आवश्यक वस्तु है, परन्तु हम उसकी सँभाल वहुत कम रखते है। महामारी, हैजा आदि रोग हवा-पानीकी बे-दरकारीके कारण ही होते है। लडाईमे रुकी हुई सेनाओंमें कभी कभी कालज्वर फैल जाता है । इसका कारण भी दूषित पानी बताया गया है । फौजको जहाँ पर जैसा पानी मिल जाता है वही उसे पीना पडता है। कई वार शहरोंमें रहनेवाले मनुष्योंको वुखार चढ आता है। इसका कारण प्राय: पानी होता है । खराव पानी पीनेसे वहुत वार पथरीकी बीमारी हो जाती है।

पानी खराव होनेके दो कारण है । एक तो ऐसी जगह पानीका होना कि जहाँ पर वह अच्छा न रह सकता हो, और दूसरा यह कि हम उसे खराव कर दें । खराव जगहके पानीको तो पीना ही न चाहिए और हम पीते भी नहीं, परन्तु हमारी असावधानीसे खराव हुए पानीको पीते हुए हम नहीं हिचकिचाते । जैसे कि नदियोंमें हम चाहे जो वस्तु डाल देते है और उसी पानीको धोने और पीनेके काममें लाते है । और होना यह चाहिए कि जहाँ पर हम नहाते-धोते हों वहाँका पानी पीनेके काममें कभी न लावें। पीनेके लिए नदीके वहावकी ओरसे पानी लेना चाहिए, जहाँ पर कोई न नहाता हो । हर एक गाँवमें नदीके दो विभाग करना चाहिए। नीचेकी ओरका पानी नहाने-धोनेके लिए और ऊपरकी ओरका पीनेके लिए रहे। पानीके आस-पास जवसे सेनाकी छावनी पडती है तब उसका एक सैनिक नदीके बहावकी देख-भाल करनेके लिए उसके किनारे पर पडाव

डाल देता है । उसके वहावकी ओरका हिस्सा कोई नहाने-धोनेके लिए काममें लाता है तो उसे सजा दी जाती है । जहाँ पर ऐसा वन्दोवस्त नहीं होता वहाँकी मेहनती स्त्रियाँ रेतीमें झरना खोद कर पानी भरती है। यह रिवाज वहुत अच्छा है । क्योंकि ऐसा करनेसे पानी रेती आदिमें छन कर मिलता है । कुएँके पानीमें कभी कभी वड़ी जोखम रहती है। कच्चे—मिट्टीके—कुएँमें जमीनके भीतरके मल-मूत्रका रस मिलता रहता है । उसमें कई वार मरे हुए पक्षी पड़े मिलते है । कई वार पक्षी घोंसले बना लेते हैं । जो कुएँ पक्के बँधे नहीं होते, उनमें पानी भरनेवालोंके पैरोंका मेल वगैरह धुल कर पानी विगड़ जाता है। मतलव यह कि कुएँका पानी पीनेमें वडी सावधानी रखनी चाहिए । टाँकियोंमें भरा हुआ पानी वहुत करके खराव होता है । टाँकीके पानीको ठीक रखनेके लिए उसे वार-वार धोना चाहिए और वह ढकी रहनी चाहिए । और जहाँसे पानीकी आय हो वह स्थान स्वच्छ रहना चाहिए । ऐसी स्वच्छता रखनेकी कोशिश वहुत ही कम आदमी करते है । पानीको ठीक रखनेका सुनहरी नियम तो यह है कि हम पानीको आध घंटे तक खूव उकाल कर उसे ठडा कर ले और फिर विना हिलाये उसे दूसरे वर्तनमें निकाल कर, तीसरे बर्तनमे मोटे कपडेसे छान कर पीनेके काममें लावें, परन्तु ध्यान रखना चाहिए कि इतना कर लेनेसे ही मनुष्य अपने कर्तव्यसे मुक्त नहीं हो जाता । सार्वजनिक उपयोगके लिए जो जल है वह उसकी और उस मुहल्ले या शहरमें रहनेवाले सारे मनुष्योंकी सम्पत्ति है । अत एव इस सम्पत्तिका उपयोग उसे एक संरक्षककी भाँति करना चाहिए । अर्थात् उसे ऐसा कोई काम न करना चाहिए जिससे पानी खराव हो । वह नदी या कुएँको खराव नहीं कर सकता, पीनेके पानीके हिस्सेको नहाने-धोनेके काममें नही ला सकता, पानीके पास मल-मूत्रका त्याग नहीं कर सकता; जलस्थानके पास मुर्देको नहीं जला सकता और न उसकी ख[illegible] पानीमें डाल सकता है ।

बहुत सँभाल रखने पर भी हमें बिलकुल अच्छा पानी नहीं मिल पाता, उसमें क्षार आदिका भाग होता है और कितनी ही बार तो सड़ी हुई वनस्पतिका अंश भी होता है। बरसातका पानी सबसे अच्छा समझा जाता है। परन्तु जब तक वह हमारे पास पहुँच पाता है उसके पहले ही उसमें हवाके भीतरके धूलके कण मिल जाते हैं। स्वच्छ जलका असर शरीर पर कुछ और ही तरहका होता है। इस कारण कई अँगरेजी डाक्टर अपने बीमारोंको 'डीस्टील्ड' अर्थात् शुद्ध किया हुआ पानी पीनेको देते है। यह पानी पानीकी भाफ बना कर तैयार किया हुआ होता है। जिसे कब्जी वगैरह रहती हो वह मनुष्य इस 'डीस्टील्ड' पानीका उपयोग करे तो उसे तुरंत दस्त हो जाता है। ऐसा जल बहुतसे केमिस्ट (विलायती दवा वेचनेवाले) वेचते है। 'डिस्टील्ड' पानी और उसके उपचार पर हालमें एक ग्रन्थ लिखा गया है। लिखनेवालेका विश्वास है कि उक्त विधिके अनुसार शुद्ध किया हुआ पानी पीनेसे बहुतसे रोग मिट सकते है। यद्यपि इस कथनमें कुछ अतिशयोक्ति है तो भी यह कुछ असम्भव बात नहीं है कि बिलकुल स्वच्छ पानीका असर शरीर पर खूब अच्छा पड़ता है।

सब लोग इस बातको नहीं जानते कि पानी हलका और भारी दो प्रकारका होता है; परन्तु जानना सबके लिए आवश्यक है। भारी पानीमें साबूको मसलनेसे उसमें झाग नहीं उठते। इसका अर्थ यह हुआ कि उस पानीमें क्षार बहुत है। जैसे खारे पानीमें साबूका उपयोग नहीं होता वैसे ही भारी पानीमें भी नहीं होता। भारी पानीमें अनाज कठिनतासे पकता है। इसी तरह भारी पानीसे अन्न पचनेमें भी कठिनाई होती है। भारी पानी स्वादमें खारा और हलका पानी मीठा या सर्वथा स्वाद-रहित होता है। कई लोगोंका विश्वास है कि भारी पानीमें पोषक तत्त्व होते हैं, अत एव उसके उपयोगसे लाभ है। परन्तु वास्तवमें देखा जाय तो

हलके पानीको काममें लाना ही अच्छा जान पड़ता है। बरसातका पानी स्वभावसे ही अच्छा होता है। वह हलका होता है। अत एव उसे काममें लाना लाभदायक है। इस बातको सब मानते है कि भारी पानीको उकाले बाद आध घंटे चूल्हे पर रहने देनेसे वह हलका हो जाता है। चूल्हेसे उतारे बाद ऊपर लिखे अनुसार उसकी व्यवस्था करनी चाहिए।

कितनी ही बार यह सवाल उठता है पानी कब पीना चाहिए और कितना पीना चाहिए। इसका सीधा उत्तर यह है कि प्यास लगे तब पीना चाहिए और जितने पानी पीनेसे प्यास बुझ जाय उतना पीना चाहिए। खानेके समय और खानेके बाद पानी पीनेमें कोई रुकावट नहीं है, परन्तु खाते समय इतना स्मरण रखना चाहिए कि खूराक शीघ्र गले उतर जाय, इस खयालसे पानी न पीना चाहिए। खूराक अपने आप गले न उतरे तो समझना चाहिए कि या तो वह अच्छी तरह चबाई ही नहीं गई या उसे कोठा नहीं चाहता।

वास्तवमें देखा जाय तो बहुत करके पानी पीनेकी जरूरत ही नहीं है और न होनी चाहिए। जैसे हमारे शरीरमें ७०/१०० से अधिक पानी है वैसे ही खूराकमें भी है। कितनी ही खूराकमें ८०/१०० से बहुत ज्यादा परिमाणमे पानी रहता है। ऐसा एक भी अन्न नहीं है जिसमें सर्वथा पानी न हो। हमारे घरोंमें भोजन बनानेमे बहुत पानी काममें लाया जाता है; इतने पर भी पानीकी जरूरत रहती ही है। यह क्यों? इसका विस्तृत उत्तर हम खूराकके प्रकरणमें देंगे; परन्तु साधारणतया यहाँ पर इतना कह सकते है कि जिसकी खूराकमें प्यास बढ़ानेवाली चीजें—जैसे मिरच, मसाला वगैरह—नहीं होते उसे थोड़ा ही पानी पीना पड़ता है। जो अपनी खूराक मुख्य कर हरे मेवेसे पूरी करते है, उन्हें कदाचित् ही केवल पानी पीनेकी इच्छा होती हो। विना कारण यदि किसी मनुष्यको प्यास लगे तो समझना चाहिए कि कुछ बीमारी है।

कई आदमी चाहे जैसा पानी पी लेते है तो भी उन्हें कुछ नहीं होता। ऊपरी निगाहसे ऐसा देख कर वहुतसे मनुष्य चाहे जैसा पानी पीने लग जाते है। इसका उत्तर जो हवाके प्रकरणमें दिया गया है वही यहाँ पर भी दिया जा सकता है। हमारे रक्तमें कई ऐसे अच्छे गुण है कि वहुत प्रकारके विषको वह रक्त ही दूर कर डालता है। परन्तु यह वात ध्यानमें रखनी चाहिए कि अच्छी तलवारको काममें लाये वाद यदि उसकी धारको ठीक न किया जाय तो उससे नुकसान ही होता है। यही वात रक्तके लिए भी है। रक्तके द्वारा अपने रक्षक सिपाहीका काम लेकर उसकी साल-सँभाल न की जाय तो उसकी शक्ति कम हो जाती है और अन्तमें नाश हो जाता है। इसमें कुछ अचंभेकी वात नहीं है। यदि हम सदा खराव पानी पीयेंगे तो अन्तमें रक्त अपना काम करना छोड देगा।

---

५ खूराक।

हवा, पानी और अन्न ये तीनों हमारी खूराक हैं। परन्तु साधारणतया हम अन्नको ही खूराक गिनते है, और गेहूँ, चने आदि दानेदार अनाजको अन्न मानते है। जो गेहूँ, चावल, जुवार आदि खाते है उन्हें अनाज खानेवाला गिनते है। वास्तवमें देखा जाय तो हवा पहली खूराक है, जिसके विना चल ही नहीं सकता। और दूसरी खूराक पानी है जो अन्नसे वढ़कर है, और कुदरतने वह इतना दिया है कि अनाजकी अपेक्षा वहुत अधिक आसानीसे मिल सकता है। अनाज तीसरे दर्जेकी अन्तिम खूराक है।

अनाजके विषयमें यह लिखना कठिन है कि कौनसा अनाज खाना चाहिए, कव खाना चाहिए और कितना खाना चाहिए। इन सव वातोंमें वडा मतभेद है। प्रत्येक देश और प्रत्येक प्रान्तकी प्रजाओंकी जुदी

जुदी रीतियाँ हैं। एक ही अनाजका अलग अलग मनुष्य पर अलग अलग प्रभाव पडता है। ऐसी स्थितिमें ठीक निर्णय कर देना, या ऐसा कह देना कि यही ठीक है, टेढी खीर ही नहीं है, अशक्य भी है। संसारके कई भागोंमें मनुष्य दूसरे मनुष्योंको मार कर उनका मांस खाते है; उन लोगोंका वही अनाज है। कई ऐसे भी है जो विष्ठा खाते हैं; उनका विष्ठा ही अनाज है। कितने ही केवल दूध पर निर्वाह करते हैं, उनका वही अनाज है। कई फलाहारी हैं, उनका अनाज फल ही है। इस प्रकरणमें अनाजसे अभिप्राय खाद्योंसे है।

यद्यपि यह कहना कठिन है कि कौनसा अनाज खाना चाहिए, परन्तु इस विषयमें विचार करना मनुष्यका धर्म है। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं है कि अनाजके बिना शरीरका व्यापार नहीं चल सकता। अनाजके लिए हम सैकडों दुःख उठाते है और अनाज हीके लिए सैकडों पाप करते हैं। ऐसी स्थितिमें यह जाननेकी आवश्यकता है कि हम अनाज क्यों खाते हैं? इससे हम विचार कर सकेंगे कि कौनसा अनाज खाना चाहिए। इस बातको सब कोई स्वीकार करेंगे कि सौमें निन्यानवे मनुष्य तो केवल स्वादके लिए खाते हैं। फिर वे बीमार पडें या अच्छे रहें, इस बातकी वे परवा नहीं करते। कितने ही मनुष्य खूब खानेके लिए जुलाब लेते है या अन्न पचनेके लिए चूर्णकी फॉकी लेते हैं। कितने ही खूब ठूँस-ठूँस कर भोजन किये बाद कै कर देते हैं और फिर स्वादिष्ट वस्तु खानेको तैयार हो जाते हैं। कोई खूब खाकर फिर एक-दो बारका भोजन नही करते। कोई खाते-खाते लापरवाही कर मर मिटते है। ये सब उदाहरण इस लेखकके देखे हुए हैं। स्वयं लेखकके जीवनमें ऐसे बहुतसे फेर-फार हुए है कि उसे अपने कितने ही कृत्यों पर हॅसी आती है और कितनोंहीके लिए लज्जा आती है। एक ऐसा समय था कि लेखक सुबह चाय पीकर दो तीन घंटे बाद नास्ता करता था और एक

बजे भोजन करता था । फिर तीन बजे चाय पीता था और ६–७ बजे पूरा भोजन करता था । उस समय लेखककी स्थिति बडी दया-पात्र थी । उसे सोजा चढ़ आता था, दवाकी बोतल उसके पास ही रहती थी । इसके लिए वह प्रायः जुलाब लिया करता था कि अच्छी तरह खाया जा सके; और पुष्टिके लिए दूसरी ओषधि लेता था । यही क्रम सदा चलता रहता था । उस समय लेखकमें जितनी शक्ति थी उससे इस समय तिगुनी शक्ति है, जब कि अब उसकी उत्तरावस्था है । उस प्रकारका जीवन दया करने योग्य है और गहराईमें उतर कर देखें तो अधम है— पाप-पूर्ण है, धिक्कारके योग्य है ।

मनुष्य खानेके लिए पैदा नहीं हुआ है और न खानेके लिए जीता ही है । परन्तु वह अपने बनानेवालेको पहचाननेके लिए जन्मा है और इसी कामके लिए जीता है । यह पहचान शरीरको निबाहे विना नहीं हो सकती और शरीर खूराकके बिना नहीं रह सकता । अत एव खूराक लेनेकी आवश्यकता पडती है । ऊँचेसे ऊँचे विचारवाले आस्तिक स्त्री-पुरुषोंके लिए इतना विचार बस है । और नास्तिक लोग भी इतना तो स्वीकार करेंगे कि आरोग्य कायम रख कर शरीरको तन्दुरुस्त रखनेके लिए खूराक लेनी चाहिए ।

पशु-पक्षियोंको देखिए । वे स्वादके लिए नहीं खाते, ठूँस कर नहीं खाते; जब भूख लगती है तब खाते है और भूक मिट जानेके जितना ही खाते हैं । वे अपनी खूराकको सिजाते नहीं है । कुदरत उसे तैयार करती है और वे उसमेंसे अपना भाग लेते हैं । तब क्या मनुष्य स्वाद लेनेके लिए पैदा हुआ है ? क्या मनुष्यके भाग्यमें ही सदाके लिए बीमारियाँ लिखी है ? उन पशु-पक्षियोंको भूक नहीं सताती जो पालतू नहीं हैं—जो मनुष्यकी संगतिमें नहीं रहते । उनमें ऐसे भेद देखनेमें नहीं आते कि कोई गरीब और कोई श्रीमान् हो, किसीको दिनमें दस वार खानेको मिलता हो और

किसीको एक-बार भी कठिनाईसे मिलता हो। यह सब भेद हमारी ही जातिमें देख पडते हैं। इतना होने पर भी हम अपनेको पशुओंसे बुद्धिमान् समझते हैं। परन्तु यह बात ध्यानमें रखनी चाहिए कि यदि हम अपने पेटको ही परमेश्वर मान कर उसकी पूजामें जीवन बिताते हैं तो हम पशु-पक्षियोंसे भी बढ़कर हैं।

बहुत विचार करने पर हम देख सकेंगे कि हम जो असत्य-भाषण, व्यभिचार, चोरी वगैरह करते है उसका प्रधान कारण हमारी स्वादेन्द्रियकी स्वतन्त्रता है। यदि हम अपने स्वादको वशमें कर लें तो दूसरे विषयोंको नष्ट कर देना फिर हमारे लिए बहुत ही आसान है। इतने पर भी हम खूब खाने और स्वादसे खानेको पाप नहीं गिनते। यदि हम चोरी करें, व्यभिचार करें, झूठ बोलें तो हमें दूसरे तिरस्कारकी निगाहसे देखते हैं; क्योंकि ये बुरे काम है। और यही कारण है कि नीति सम्बन्धी कई उत्तमोत्तम ग्रन्थ चोरी, व्यभिचार और असत्यके सम्बन्धमें लिखे गये हैं, परन्तु स्वादेन्द्रियके वश हुए लोगोंके सम्बन्धमें कोई ग्रन्थ आज तक नहीं लिखा गया। यह नीति और अनीतिका विषय ही नहीं समझा गया। इसका प्रवल कारण तो यह है कि हम सब एक ही नावमें बैठे हुए है। हमारे महा पुरुष भी स्वादको सर्वथा न जीत सके—स्वाद लेनेमें उन्हें भी दोष न देख पडा। उन्होंने बहुत किया तब यह लिखा है कि हमें इन्द्रियोंको वशमें रखनेके लिए जहाँ तक बने मिताहारी होना चाहिए, परन्तु यह नहीं लिखा कि स्वाद लेनेसे हममें और और दोष भी पैदा हो जाते हैं। अच्छी सोसायटीवाले चोर, ठग और विषयी मनुष्यको निकाल भले ही दूर कर दें, परन्तु वे स्वयं साधारण-वर्गसे कई गुणा स्वाद लेते होंगे। मनुष्यका गृहस्थीपन उसकी थालीमें समाया हुआ है। जैसे चोरोंके गाँवमें चोरी गुनाह नहीं समझा जाता वैसे ही हम सब स्वादेन्द्रियके गुलाम होनेके कारण इस गुलामीमें गुनाह नहीं गिनते। इतना ही नहीं उलटा

हम इसमें आनन्द मानते है। विवाहके समय हम स्वादके लिए अच्छे अच्छे भोजन बनाते है। मरणके समय भी ऐसा करते नहीं चूकते। त्यौ-हार आया कि मिठाई बनी। मेहमान आया कि अच्छी-अच्छी तैयारियाँ हुई। अडोसी-पडोसी और सगे-सम्बधियोंको न खिलावें या उनके यहाँ न खावे तो मूर्खता समझी जाती है। निमन्त्रित सज्जनको खूब ठूँस-ठूँस कर न खिलावें तो कंजूस समझे जाते है। छुट्टीके दिन अच्छा भोजन करना ही चाहिए। रविवारके दिन अजीर्ण हो जानेके जितना खाना ही चाहिए। इस तरह हमने एक दोषको भी गुण ठहरा लिया है। खानेकी तैयारीमें हमने अनेक ढोंग शामिल कर दिये है, जिससे हम अपनी गुला-मी, अपने पशुपनेको किसी तरह न देख सकें। यह प्रश्न आरोग्य-विषयकी मर्यादाके बाहर जाता है, अत एव इसे हम यहीं पर छोड़ देते है। परन्तु आरोग्यके सम्बन्धमें जितना विचार करना आवश्यक है उतना सबको करना चाहिए।

अब दूसरी रीतिसे विचार किया जाता है। संसारका ऐसा नियम देख पडता है कि प्रकृति ससारके सब प्राणियोंके लिए सदा खूराक तैयार करती है। प्रकृतिके राज्यमें बीमे नहीं उतारे जाते। वहाँ कोई भूल नहीं होती। कोई सोता नहीं है। कोई आलस नहीं करता। वहाँका कार्य नियमित रीतिसे प्रतिक्षिण हुआ करता है अर्थात् प्रकृतिको सालभरका या एक दिनका भंडार नहीं भरना पड़ता। हमें इच्छासे या अनिच्छासे उसके कानूनके वश होना ही पडता है। यदि हम उसके नियमोंको समझ कर चलें तो एक भी घरमे, एक दिनके लिए भी भूक अपना डेरा न जमा सके। यह बात स्पष्ट है कि संसारमें खाद्य तो मनुष्योंके योग्य ही होता है। उसमें अगर कोई ज्यादा खा जाय, या न खानेकी चीज खा जाय तो औरोंके लिए कमी पड़ेगी ही, और यह बात हुई तो कहीं-न-कहीं भूखके डेरे लगे होंगे। इस संसारमें हजारों राजा-महाराजों और

सेठ-साहूकारोंकी रसोईमें उनके और उनके नौकरोंके लिए आवश्यकतासे बहुत ज्यादा अनाज उठता है। यह सारा अन्न वे दूसरोंके पेटका ले लेते हैं। फिर संसारमें क्यों न भूखकी ज्वाला बढ़े ? कल्पना करो कि दो कुओंकी एक ही झिर है और उन दोनोंमें बराबर पानी जाता है। अब इनमेंसे एक कुएँमें ज्यादा पानी जाने लगे तो दूसरेमें कम हो ही जायगा। यदि यह नियम सही है तो ऊपर लिखा हुआ नियम कुछ इस लेखकके घरका नहीं है। यह नियम बड़े ही बुद्धिमान् महापुरुषोंका बनाया हुआ है। अब यदि हम अपनी आवश्यकतासे अधिक खाते हैं तो वह अनाज चोरीका खाते हैं। जितना हम स्वादके लिए खाते हैं वह कच्चे पारेकी भाँति किसी-न-किसी रूपमें फूट निकलता है। उतने ही रूपमे हमारा स्वास्थ्य बिगड जाता है और हम दुखी हो जाते हैं। इतना समझ लेनेके बाद हम इस बातका निर्णय सहजमें कर सकेंगे कि कौनसी खूराक खानी चाहिए और कितनी खानी चाहिए।

इस बात पर विचार करनेके पहले कि कौनसी खूराक खानी चाहिए यह विचार करना ठीक होगा कि कौनसी खूराक न खानी चाहिए। मुँहके द्वारा जो कुछ हमारे पेटमें जाता है वह सब यदि खूराक समझा जाय, अनाज कहा जाय तो अफीम-तंबाखू, भाँग-गाँजा, चाह-काफी, कोको-शराब, मसाले वगैरह सब अनाज कहे जाने चाहिए। परन्तु इस लेखकको बडे ही अनुभवसे जान पड़ा है कि इन चीजोंको सर्वथा छोड़ देना चाहिए, ये खाने या पीने योग्य नहीं है। कितनी ही चीजोंका इसे स्वयं अनुभव है और कितनी ही चीजोंका इसने दूसरोंको अनुभव करते देखा है।

शराब और भाँगके लिए तो लिखना ही क्या, प्रत्येक मतमें इनकी मनाई की गई है। इनके पीनेकी कदाचित् ही कोई आज्ञा देता हो। शराबसे कुटुम्बके कुटुम्ब नष्ट हो गये। लाखों शराबी धूलमें मिल गये।

शराव पीनेवालेको कुछ भान नही रहता । कई बार वह मा और स्त्रीके भेदको भी भूल जाता है ! शराबसे मनुष्यका कोठा जल जाता है, और अन्तमें वह पृथ्वीका भार-रूप हो जाता है । शराव पीनेवाले मोरियोंमें पड़े देखे गये हैं। ऐसी स्थिति शराब पीते ही हो जाती है, यही नहीं, सचेत अवस्थामें भी शराबीकी बड़ी बुरी दशा रहती है । उसका मन भटकता रहता है। वह भानमें होता है तब भी सुस्त रहता है । अत एव शराब और इसीके जैसी भॉग सर्वथा छोड़ने लायक वस्तु है। इस विषयमें दो मत होने ही न चाहिए । कुछ लोगोंका कहना है कि दवाके तौर पर शराब ली जा सकती है, परन्तु असलमें इसकी आवश्यकता ही नहीं है। इस बातको योरप-(जो शराबका घर है) के डाक्टर भी मानते है। पहले वे बहुतसी बीमारियोंमें शराबको काममें लाते थे, पर अब वह बिल्कुल बंद कर दी गई है। यह जो दवामें शराब लेनेकी दलील दी जाती है वह किसी और ही उद्देशसे दी जाती है । शराबके हिमायती कहना चाहते है कि दवामें जब शराब पीते ही है तब फिर वैसे पीनेमें क्या दोष है ? परन्तु उन्हें सोचना चाहिए कि विष या अजेपाल्या दवाके तौर पर काममें आता है, यह कह कर कोई उसे खूराक नहीं बनाता । कदाचित् ऐसा हो भी सकता है कि किसी बीमारीमें शराबसे लाभ भी पहुँचे, परन्तु इससे इतना नुकसान पहुँचा है कि किसी भी समझदार मनुष्यका कर्तव्य है कि वह शराबको दवाके तौर पर भी न ले। शराबके सेवनसे शरीरको कायम रखनेमें यदि हजारों मनुष्योंका अमंगल होता है तो ऐसे शरीरको नष्ट हो जाने देना ही अच्छा है। हिन्दुस्तानमें लाखों मनुष्य ऐसे हैं जो डाक्टरके सलाह देने पर भी शराबको नहीं छूते। वे शराबकी या जिस चीजकी प्रतिज्ञा कर लेते है उसे जीते जी कभी नहीं लेते । अफीमका भी शराबके साथ ही विचार करना चाहिए। अफीमका नशा शराबके नशेसे दूसरे प्रकारका होता है, परन्तु

इससे होनेवाली पायमाली शराबसे कम नहीं है । अफीमके वश हु
चीनी प्रजा महान् और स्वतन्त्र होने पर भी निर्बल हो गई । अफीमके
वश हुए हमारे जागीरदार अपनी रोटी खो बैठे है ।

जैसे दारू, भॉग और अफीम खराब है वैसे ही चुरुट-तम्बाखू भी
खराब है। चुरुट-तम्बाखूकी सत्ता मनुष्य-जाति पर इतनी ज्यादा है कि
इसके दूर करनेमें बहुत समय लगेगा । छोटे-बड़े सब इसकी झडपमें आ
गये है । आश्चर्य तो यह है कि नीतिमान् कहलानेवाले मनुष्य भी इसका
व्यवहार करते हैं—उसे काममें लाते हुए वे शरमाते नहीं है । मित्रोंके
स्वागत करनेके लिए यह एक बडा भारी साधन हो गया है । इसकी
रुकावट तो होती नहीं और फैलाव ही अधिक होता जाता है । साधारण
मनुष्य तो जानते भी नहीं कि चुरुटका व्यसन दृढ करनेके लिए चुरुटके
व्यापारी उसकी बनावटमें नित-नई हजारों युक्तियॉ किया करते है
जर्दे पर वे अनेक प्रकारके सुगन्धित तेजाब छींटते हैं, उसमें अफीमका
जल सींचते है । परिणाम यह होता है कि इन प्रयोगोंसे चुरुट
हम पर ज्यादा ज्यादा असर जमाती जाती है। इसका फैलाव करनेके
लिए लाखों रुपये विज्ञापनमें खर्च किये जाते है । योरपमें चुरुट बेचनेवाली
हजारों, बल्कि लाखों ऐसी कंपनियॉ है जो अपने छापेखाने चलाती है,
बायस्कोप खरीदती है, अनेक प्रकारके इनाम बॉटती हैं, लॉटरियॉ
निकालती हैं; और प्रसिद्धिके लिए पानीकी तरह पैसा बहाती हैं
इसका परिणाम यह हुआ कि स्त्रियॉ भी चुरुट पीने लग गईं ! चुरुट
पर कवितायें बनी है और चुरुटको गरीबके मित्रकी उपमा दी गई है!!

चुरुट और तम्बाखूसे जो नुकसान पहुँचा है उसका ऑकडा नहीं
बॉधा जा सकता । चुरुट पीनेवाले मनुष्य ऐसे ज्ञान-शून्य हो जाते है
कि किसीकी परवा न करके दूसरोंके घरमें बिना इजाजतके ही चुरुट
जलाने लगते है और लज्जित नहीं होते ।

ऐसा देखा गया है कि चुरुट-तम्बाखू पीनेवाले मनुष्य उसकी प्राप्तिके लिए और भी अनेक अपराध करते हैं । बच्चे अपने घरोंमेंसे पैसे चुरा लाकर चुरुट पीते है । जैलमें कैदी लोग बडी जोखम उठा कर चुराई हुई चुरुटको छिपा रखते है । वे दूसरी खूराकके विना भले ही रह जायँ, परन्तु बीडीके विना नहीं रह सकते । लडाईमें चुरुट पीनेवाले सिपाही चुरुट न मिलने पर दीन होकर किसी कामके नहीं रहते ।

चुरुटके सम्बन्धमें लिखते लिखते स्वर्गीय टालस्टायने लिखा है कि एक मनुष्यको अपनी स्त्रीका खून करनेका विचार हुआ । उसने छुरी निकाली, वह चलानेको तैयार हुआ, पछताया और पीछे हट गया । फिर चुरुट पीनेको बैठ गया । जहाँ चुरुटका धुआँ उसके दिमागमें समाया कि चुरुटके विपसे उसकी बुद्धि घिर गई और उसने खून कर डाला । टालस्टा-टाय मानते थे कि चुरुट एक ऐसा सूक्ष्म नशा है कि वह कितने ही अंशमें शरावसे भी खराव माना जाना चाहिए ।

चुरुटका खर्च भी कुछ साधारण नहीं है । चुरुट पीनेवालोंको उनकी हैसियतके अनुसार यह खर्च ज्यादा पडता है । कितने ही मनुष्य चुरुटके पीछे ७५ रुपये महीना खर्च कर देते हैं । ऐसे उदाहरण इस लेखकने स्वयं अपनी आँखों देखे हैं ।

चुरुटसे पाचन-शक्ति कम हो जाती है, स्वाद जाता रहता है और भोजन फीका लगने लगता है, अत एव भोजनमें मसाले वगैरह डालने पडते है । चुरुट पीनेवालेका श्वास वदवू मारने लगता है । चुरुटका धुआँ हवाको खराव करता है । कितनी ही वार इससे मुँहमें छाले पड जाते हैं, दाँत, दाढ काले या पीले पड जाते है और कितने हीको तो इससे भयंकर वीमारियाँ हो जाती है । जो मनुष्य इस वातको मानता है कि शरावका नशा खराव है, फिर समझमें नहीं आता कि वह चुरुटका नशा कैसे कर सकता है । इतने पर भी जो लोग चुरुट पीते है, इससे जान पडता है कि

इस नशेकी सूक्ष्मता उन्हें फँसाती है। निरोग रहनेकी इच्छा करनेवाले आदमीको चाहिए कि वह चुरुटको अवश्य छोड़ दे।

शराब, तम्बाखू, भॉग, आदिके व्यसन हमारे शरीरके आरोग्यको नष्ट कर देते हैं। इतना ही क्यों, हमारे धन और मनके आरोग्यको भी वे नष्ट कर देते हैं, और हमें अपना गुलाम बना कर हमारी नीतिका भी नाश कर देते है।

यह काम अत्यन्त कठिन जान पड़ता है कि चाय, काफी और कोकोको बुरी बता कर समझा दिया जाय, परन्तु इतना कहे बिना छुटकारा नहीं है कि ये चीजें दूषित अवश्य है। इनमें भी एक तरहका नशा है। अगर चाय काफीके साथ दूध-शक्कर न मिलाई गई हो तो उनमें पोषण करनेवाला कोई तत्त्व नहीं है। इसके लिए कितने ही प्रयोग किये गये है कि मनुष्य सिर्फ चाय-काफी पर रह सकें। परन्तु अन्तमें परिणाम यही निकला कि इनमें खून बढानेवाली चीजें बिल्कुल नहीं है। साधारण तौर पर थोडे ही वर्ष पहले हम न चाय पीते थे और न काफी, परन्तु सुधारका प्रवेश हुए बाद चाय-काफी एक साधारण वस्तु हो गई है। हम पर इसका इतना गहरा असर हुआ है कि कोई हमसे मिलने-जुलनेको आता है तो उसे भी हम यही चाय-काफी पिलाते है। चायकी पार्टियॉ दी जाने लगी है। लार्डकर्जनके जमानेसे तो चायने कहर ढा दिया है। आपने चायके व्यापारियोंकी हिमायत करके घर घरमें चायके फैलानेका पुण्य उपार्जन किया था और आप हीकी कृपाका यह फल है कि अब लोग निरोगी वस्तुके पीनेकी जागह रोगभरी चायको पीने लग गये।

कोकोका फैलाव इस लिए अधिक न हुआ कि वह चायसे महँगा है। इसे हमारा सौभाग्य कहना चाहिए कि कोकोसे हमारी घनिष्ट मैत्री नहीं हुई, परन्तु फैशनेबल घरोंमें तो इसकी बडी भारी राज-सत्ता है।

चाय, काफी और कोको इन तीनों वस्तुओंमें ऐसा गुण है कि वह हमारी पाचन-शक्तिको मन्द करता है। इनमें नशा है, क्योंकि जिन्हे इनका व्यसन पड जाता है वे इन्हें छोड नहीं सकते। लेखक जब स्वयं चाय पीता था तब ठीक समय पर चाय न मिलती तो उसे आलस आने लगता था। निःसन्देह ये नशेके लक्षण हैं। एक वार एक उत्सवमें कोई ४०० के लगभग स्त्रियाँ और बच्चे इकट्ठे हुए। व्यवस्थापक मंडलने निश्चय किया कि इन्हें चाय-काफी न दी जाय। इस उत्सवमें जो स्त्रियाँ इकट्ठी हुई थीं उन्हें शामके ४ बजे बराबर चाय पीनेकी आदत थी। व्यवस्थापकोंको सूचना दी गई कि स्त्रियोंको चाय न मिलेगी तो वे बीमार हो जायँगी, चल-फिर न सकेंगी। तब लाचार हो कर व्यवस्थापक मंडलको अपना प्रस्ताव बदल देना पडा। चाय बनानेकी तैयारी हो ही रही थी कि इतनेमें दौडा-दौड मच गई। चायकी जल्दीने एक तूफानसा खडा कर दिया। स्त्रियोंके माथे चढ गये। उनका पल पल महीनेके जैसा बीतने लगा। जब चाय मिली तब कहीं इन भली बाइयोंके मुख पर चमक आई और वे सावधान हुई। यह दृश्य कल्पना नहीं, किन्तु सच्ची घटना है। एक बाईको चायकी आदतसे इतना नुकसान पहुँचा कि उसका हाजमा खराब हो गया और सदा उसका सिर दुखने लगा, परन्तु जबसे उसने मन मार कर चाय छोड़ दी तबसे उसकी तबीयत बहुत ही ठीक हो गई। इंगलैंडकी बेटरसी म्युनिसिपालटीके डाक्टरने शोध कर बतलाया है कि उसके मुहल्लोंमें जो हजारों स्त्रियोंके ज्ञान-तन्तु खराब हो गये हैं, उसका कारण चायका व्यसन है। इस लेखकने ऐसे अनेक उदाहरण देखे है, जिनमें चायसे मनुष्योंका स्वास्थ्य बिगड़ गया है। लेखकको पूर्ण विश्वास है कि चायसे मनुष्यके स्वास्थ्यको बहुत ही नुकसान होता है।

काफीके सम्बन्धमें एक दोहा प्रसिद्ध है—

कफ-काटन बादी-हरन, धातु-हनि बल-छीन।
लोहीको पानी करे, दो गुन औगन तीन॥

यह दोहा ठीक जान पडता है। कफ और वायुके हरनेकी शक्ति काफीमें भले ही हो; परन्तु इससे वह पीने योग्य नहीं हो सकती। यह शक्ति और और वस्तुओंमें भी है, अत एव इन कारणोंसे जो काफी पीना चाहते हों उन्हें थोड़ासा अद्रकका रस पीना चाहिए, उससे काफी पीनेकी गरज निकल जायगी। परन्तु जो वस्तु धातुको—जिसका संग्रह करनेकी जरूरत है—नष्ट करती है, बलको क्षीण करती है और खूनका पानी बनाती है; उसका त्याग करना ही अच्छा है। कोकोमें भी काफीके समान दोष और चायके जैसा नशा है। इससे भी संज्ञा-हीनता होती है।

जो आरोग्यमें नीतिका भी समावेश करते है उनके सन्मुख इन तीनों वस्तुओंके विषयमें नीचे लिखी हुई युक्ति विशेषताके साथ दी जा सकती है। चाय, काफी और कोको बहुत करके शर्तबँधे मजदूरोंकी मेहनतसे पैदा होते है। जहाँ ये पैदा होते है वहाँके लोगों पर जैसा जुल्म होता है उसे यदि हम अपनी आँखोंसे देख सकें तो कभी इन्हें काममे न लें। कोकोके खेतों पर जो अमानुषिक अत्याचार किये जाते है उन पर बडे बडे ग्रन्थ लिखे गये हैं। सच बात तो यह है कि हम सब यदि अपनी खूराककी उत्पत्तिके सम्बन्धमें पूरा पूरा ज्ञान सम्पादन करनेका यत्न करें तो ९०% इन चीजोंका ही त्याग कर दें।

इन वस्तुओंकी एवजमें निर्दोष और पुष्टि-कारक चाय नीचे लिखी हुई रीतिसे बन सकती है। काफी और इस निर्दोष चायके स्वादमें बहुतसे काफी पीनेवाले भी फरक नहीं बतला सकते। गेहूँको लेकर खूब साफ करने चाहिए। फिर उन्हें चूल्हे पर कडाईमें सेकने चाहिए। यहाँ तक कि वे सुर्ख होकर कुछ कुछ कालेस पर आ जावें। फिर उन्हें उतार

कर काफीकी चक्कीमें साधारण बारीक दल लेना चाहिए। उसमेंसे एक चम्मच प्यालेमें डाल कर उस पर खौलता हुआ पानी डालना चाहिए। अगर इसे एक मिनिट तक चूल्हे पर रक्खा जाय तो बहुत ही अच्छा होगा। इसमें जरूरतके अनुसार दूध-शक्कर डालनी चाहिए। दूध-शक्करके बिना डाले भी यह पी जा सकती है। हर एक मनुष्यको यह प्रयोग करके देखना चाहिए। इसे पीना शुरू करके जो लोग चाय, काफी और कोकोका पीना छोड़ देंगे उनका पैसा बचेगा और स्वास्थ्य खराब न होगा। इसके सिवाय जो लोग गेहूँको सेकने आदिकी तकलीफ न करना चाहें वे इस चूर्णको लेखकके पास—सत्याग्रह-आश्रम, अहमदाबाद—से मँगा सकते हैं।

इस विषयको पढ कर हम यह जान गये कि कितने ही पदार्थ तो सर्वथा छोड़ने योग्य है। अब यह बतलाना बाकी है कि कितने ही पदार्थ ऐसे है जो अन्य कारणोंसे छोडने या कम ग्रहण करने योग्य है। परन्तु इसे छोड़ कर इस समय यह विचार किया जाता है कि हमारी खूराक क्या होनी चाहिए।

हम खूराकके सम्बन्धमें संसारके सबसे बड़े तीन विभाग कर सकते हैं। (१) पहले विभागमें वे मनुष्य है जो कि इच्छासे या विवश होकर केवल वनस्पतियोंसे उत्पन्न हुई वस्तु पर निर्वाह करते हैं। यह विभाग सबसे बड़ा है। इस विभागमें हिन्दुस्तान, योरप और चीन-जापानका बड़ा हिस्सा है। इनमें कुछ लोग तो धर्मके कारण केवल वनस्पतिके पदार्थ खाते हैं, और बहुतसे मांस आदि न मिलनेके कारण वनस्पति पर निर्वाह करते है। परन्तु ऐसे लोग मौका मिलने पर प्रसन्नतासे मांस खाते रहते है। ऐसे लोग इटेलियन, आइरिश, स्काटलैडके बहुतसे लोग, रशियाकी गरीब वस्ती और चीन-जापानकी साधारण प्रजा है। इटलीकी मुख्य खूराक मेकेरोनी, आयर्लैंडकी पुटेटो, स्काटलैडकी ओटमील और चीन-

जापानकी चावल हैं। (२) दूसरे विभागके लोग वनस्पतिके साथ किसी-न-किसी प्रकारके मांस या मछली आदिको—एक या अनेक बार—सदा खाते हैं। इसमें इगलैंडका बड़ा हिस्सा है। हिन्दुस्तानके अमीर मुसलमान या वे हिन्दू जो मांस खाना धर्मके विरुद्ध नहीं मानते, इसी विभागमें है। धनिक चीनी-जापानी भी इसी विभागमें है। यह विभाग यद्यपि अब पहलेसे छोटा हो चला है तब भी बहुत बड़ा है। (३) तीसरे विभागमें बहुत ठंडे देशमें रहनेवाली जंगली प्रजा और कितने ही सिद्दी है जो मांस पर ही निर्भर हो रहे है। यह विभाग बहुत छोटा है और ज्यों ज्यों यूरोपियन यात्रियोंके समागममें आता जाता है त्यों त्यों और भी छोटा होता जाता है। अर्थात् अपनी खूराकमें वह वनस्पतिको शामिल करता जाता है। ऐसी स्थितिमें हम सहजमें ही यह अनुमान कर सकते हैं कि मनुष्य तीनों स्थितिमें जीवित रह सकता है, परंतु हमें तो यह सोचना है कि सबसे अच्छी आरोग्य-वर्धक खूराक कौनसी है?

शरीरकी रचना देखनेसे जान पड़ता है कि कुदरतने मनुष्यको वनस्पति खानेके लिए बनाया है। दूसरे प्राणियोंके साथ तुलना करनेसे जान पड़ता है कि हमारी रचना फलाहारी प्राणियोंसे बहुत अधिक मिलती है। ऐसे प्राणियोंमें बंदर हैं और उनसे हमारी रचना प्रायः मिलती है। बन्दर हरे और सूखे फल-फूल खाते हैं। फाड़ खानेवाले शेर-चीते आदि जानवरोंके दाँत और कोठेकी बनावट हमारे कोठेकी बनावटसे भिन्न ही प्रकारकी है। उनके पंजेके सदृश हमारे पंजे नहीं हैं। पशु मांसाहारी नहीं है,—जैसे गाय-बैल। हम इनसे कुछ कुछ मिलते-जुलते है, परन्तु घास खानेके लिए आरेके जैसी आतें उन्हींकी है, हमारी नहीं हैं। इन बातोंको देख कर बहुतसे वैज्ञानिक लोग कहते है कि मनुष्य मांसाहारी नहीं है। इतना ही क्यों, वह चाहे जिस वनस्पतिके खानेके लिए भी नहीं बना है। उसकी असली खूराक तो वनस्पतिमें भी कोई खास खास फलादि ही होनी चाहिए।

रसायन-शास्त्रियोंने प्रयोग करके बतलाया है कि मनुष्यके निर्वाहके लिए जिन तत्त्वोंकी आवश्यकता है वे सब तत्त्व फलोंमें है—केले, नारंगी खजूर, अंजीर, सेव अनन्नास, बादाम, अखरोट, मूँगफली, नारियल आदिमें तन्दुरुस्तीको कायम रखनेवाले सारे तत्त्व हैं। इन वैज्ञानिकोंका मत है कि मनुष्यको रसोई पकानेकी कोई आवश्यकता नहीं है । जैसे अन्य प्राणियोंको सूर्य-तापसे पकी हुई वस्तु पर अपनी तन्दुरुस्ती कायम रखना पडती है वैसें ही हमारे लिए भी होना चाहिए । उनका मन्तव्य है कि पका कर खानेसे वनस्पतियोंका सत्त्व नष्ट हो जाता है और उनमें पोषक-शक्ति कम हो जाती है । वनस्पतिका खास गुण चैतन्य प्रदान करना है और वह पकानेसे निर्बल हो जाता है । इन लोगोंका तो यहाँ तक कहना है कि पकाये विना जिस वनस्पतिको हम खा नहीं सकते वह हमारी खूराक ही नहीं हो सकती ।

यदि ऊपर लिखी हुई बात सही हो तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमारे घरोंमें जो बहुत-सा समय रसोई बनाने और खानेमें व्यतीत होता है वह न हो । थोडे समयमें ही खाने-पीनेका सब काम-काज निवट जाया करे । हमारे स्त्री-वर्गका बहुतसा समय जो घरकी रसोई बनानेमें लगता है वह बच जाय और बहुतसी बातोंमें हम ऐसे स्वतन्त्र हो जायँ कि जिससे बचे हुए पैसे और समयका बहुत अच्छा उपयोग कर सकें ।

इस विषय पर लोग आपत्ति उठा सकते हैं कि यदि सब कोई रसोई बनाना बन्द कर दें, स्त्रियोंको रसोई बनानेकी कैदसे छुड़ा दिया जाय, या स्त्रियाँ ही स्वयँ छूट जाना चाहें तो ये सब बातें स्वप्नकी-सी है—हो नहीं सकतीं । परन्तु अभी हम इस बात पर विचार नहीं कर रहे हैं कि सब ऐसा कर सकते है या नहीं, हमें तो सिर्फ यह देखना है कि अच्छा क्या है । क्योंकि आरोग्य-सम्बन्धी सब बातें हम समझ लें तब कहीं साधारण आरोग्य लाभ कर सकते है । इस बातको समझ लेनेके

बाद कि सर्वोत्तम खूराक कौनसी है, हम जान सकेंगे कि साधारणतया क्या खाना चाहिए।

एक बात और है, यदि फलाहार उत्तम खूराक हो तो हमें इस बातसे विशेष सम्बन्ध नहीं है कि सब उसे ग्रहण कर सकते हैं या नहीं, परन्तु इसमें किसी प्रकारका विरुद्ध मत नही हो सकता कि यदि हम ग्रहण कर सकते हों तो हमें उसका उपयोग करना चाहिए।

इस विषय पर योरपमें बहुतसे ग्रन्थ लिखे गये हैं। ऐसे बहुतसे अँगरेज है जिन्होंने फलाहारके प्रयोगकी परीक्षा की है। उनमें बहुतोंने अपने अनुभवकी बातें प्रकट भी की है। ये सब लोग धर्मके कारण फलाहारी नहीं हुए, किन्तु आरोग्यके लिए हुए है। जुस्ट नामके एक जर्मनने फलाहार पर एक ग्रन्थ लिखा है। बहुतसे उदाहरण और दलीलें देकर उसने बतलाया है कि फलाहार उत्तम खूराक है। उसने बहुतसे बीमारोंके रोग फलाहार और खुली हवासे मिटाये हैं। उसका कहना तो यहाँ तक है कि जिस देशमें जो फल मिलते हैं मनुष्य उन्हींमेंसे अपने पोषण-के लिए सब तत्त्व पा सकता है।

यहाँ पर मै अपने ही किये हुए प्रयोगका वर्णन करूँ तो कुछ अनु-चित नहीं होगा। छः महिनेसे मैंने अन्न नहीं खाया, केवल फलो पर ही गुजर किया है। यहाँ तक कि दूध-दहीको भी मैंने नहीं छुआ। मेरी खूराक केले, मूँगफली जेतूनका तेल (ओलिव-आइल), नींबू या ऐसा ही और कोई फल और खजूर है। मैं नहीं कहता कि यह प्रयोग बराबर फलीभूत हुआ है। क्योंकि ऐसे बडे भारी फेर-फारका प्रभाव जाननेके लिए छः महीने पर्याप्त नही हैं। परन्तु इतना तो तब भी कहा जा सकता है कि जब और और मेरे साथी बीमार पड़े है तब मेरी प्रकृति ठीक रही है। मुझमें पहले जितनी मानसिक और शारीरिक शक्ति थी उससे अब ज्यादा बढ़ गई है। शारीरिक शक्तिके सम्बन्धमें मै कह सकता हूँ कि पहले

जितना भार मै उठा सकता था उतना कदाचित् मुझसे न भी उठे; परन्तु पहले जितने समय तक मैं मजदूरी कर सकता था उससे ज्यादा समय तक—विना थके—अब कर सकता हूं। कितने ही बीमारों पर मैंने इस प्रकारकी खूराककी आजमाइश की तो उसका परिणाम बडा ही आश्चर्यकारक हुआ है। उसका वर्णन मै बीमारीके प्रकरणमें करूंगा। कहनेका मतलब यह है कि दूसरोंके और अपने निजी अनुभवसे और जो कुछ पढ़ कर मैंने विचार किया है उससे इतना जान पडता है कि फलाहार एक प्रकारकी उत्तम खूराक है।

मैं इस बातको नहीं मानता कि इस प्रकरणको पढ़ कर कोई फलाहारका प्रयोग करने लगेगा। मेरे इस लेखका असर शायद ही पढ़नेवालों पर हो, परन्तु मुझे तो सत्य बात लिखना है; और मेरी ऐसी ही धारणा है। फिर मेरा यह कर्तव्य है कि जो कुछ मुझे ठीक जान पड़े वही मैं बतलाऊँ।

परन्तु किसी पढ़नेवालेके जीमें फलाहारका प्रयोग करनेकी इच्छा हो तो उसके प्रति मेरी यह नम्र सूचना है कि वह एकदम न कूद कर धीरे धीरे इस विषयके अभ्यासको बढ़ावे। सब प्रकरणोंको पढ़नेके बाद सार खींच कर—समझ कर—जो कुछ उसे उचित जान पड़े वह करे।

अब हम दूसरे वर्गकी खूराक पर विचार करते है। मेरा विश्वास है कि लोगोंको यह ज्यादा पसन्द पड़ेगी। फलाहारके सम्बन्धकी बातें भी इसे समझ लेनेसे अच्छी तरह समझमें आ जायँगी। इन प्रकरणोंको पढ़नेवालोंसे मेरी प्रार्थना है कि सब प्रकरणोंको पूरे पढे बाद ही वे अपने अन्तिम विचार स्थिर करें।

दूसरे दर्जेकी खूराक वनस्पति है। इसमें शाक-भाजी, अन्न, द्विदल अन्न और दूध आदिका समावेश होता है। जैसे फलाहारमें मनुष्यके लिए आवश्यक तत्त्व मिल जाते हैं वैसे ही वनस्पतिमें भी मिलते है। इतना होने पर भी दोनोंका असर एकसा नहीं होता। हमें जो तत्त्व

खूराकसे मिलते हैं उनमेंके कितने ही तत्त्व तो हवामें भी है । तथापि उन्हें हवामेंसे ग्रहण कर हम खूराकके विना काम नहीं चला सकते । वनस्पतिको पकानेसे उसका असली तत्त्व नहीं रहता; वह निर्वल हो जाती है । परन्तु हम वहुत करके वनस्पतिको पकाये विना नहीं खा सकते । यदि मनुष्यको पकाया हुआ अन्न खाना हो और शाक-भाजीके बिना काम नहीं चल तो यह विचार करना आवश्यक है कि उनमें कौनसी वस्तु अच्छी है ।

सब अन्नोंमें गेहूँ अच्छा है । अकेले गेहूँको खाकर मनुष्य अपना निर्वाह कर सकता है । उसमें पोषण करनेवाली सब चीजें ठीक परिमाणमें है । उसकी अनेक जातिकी चीजें बन सकती है और सहजमें पच जाती हैं । बच्चोंके लिए जो तैयार खूराक मिलती है उसमें भी कुछ गेहूँका हिस्सा रहता है । गेहूँकी श्रेणीमें, जुवार, बाजरी, जौ और मक्का भी है । यद्यपि ये गेहूँकी समता नहीं कर सकतीं तो भी इन सबकी रोटियाँ बन सकती हैं । यह बात समझने योग्य है कि गेहूँको किस तरह खाना चाहिए । सफेद आटा, जिसे हम ' मिल फ्लावर ' के नामसे पुकारते हैं, किसी कामका नहीं है । इसमें कुछ सत्त्व नहीं है । डाक्टर एलिन्सन कहते है कि उनने इस आटेकी खूराक पर एक कुत्तेको रक्खा था, वह मर गया, परन्तु दूसरे आटेकी रोटी पर जो कुत्ता रक्खा गया था वह कुत्ता जिन्दा रहा था । सफेद आटेमेंसे गेहूँके छिलके निकाल लिये जाते हैं और स्वाद तथा शक्ति छिलकोंमें ही होती है । सफेद आटेकी रोटीकी जो ज्यादा खपत है, इसका कारण यह जान पडता है कि मनुष्य जुदे जुदे स्वाद लेना चाहते है, और इसी लिए वे सफेद रोटी खाते हैं । जिस भाँति कि चीझ * (पनीर) के खानेवालोंको पुष्टिकारक सत्त्व चीझमेंसे ही मिल जाता है; परन्तु वे उसे रोटीके साथ खाते है । ऐसे आटेकी रोटी अच्छी

* योरपका यह एक खाद्य पदार्थ है ।

नहीं वनती। वह चमड़ेल होती है, उसमें स्वाद या गुण नहीं रहता। सबसे अच्छा आटा तो वह है कि जो ठीक तौरसे साफ किये हुए गेहूँको घर पर पीस कर तैयार किया हुआ हो और वह भी पत्थरकी चक्की द्वारा अपने हाथोंसे पीसा गया हो। परन्तु यदि पत्थरकी चक्की न मिल सके तो थोड़े मूल्यकी, हाथसे फेरनेकी चक्की घरमें रख कर अपने आप आटेको तैयार करना चाहिए या वोयर-मिल लेकर उसका उपयोग करना चाहिए। पीसे हुए आटेको विना छाने काममें लाना चाहिए। इस तरहके आटेकी रोटी स्वाद और सत्त्ववाली होती है। और यह आटा सफेद आटेकी अपेक्षा ज्यादा दिन भी चलता है। क्योंकि उसमें विशेष सत्त्व होनेके कारण थोड़े ही आटेसे काम चल जाता है।

यह वात ध्यानमें रखने लायक है कि वाजारकी रोटियाँ किसी कामकी नहीं होतीं। वे रोटियाँ सफेद और भूरी (ब्राउन) हों तो भी उनमें मिलावट होती है। एक वात और भी है। वह यह कि उस आटेकी रोटियाँ खमीर डाल कर वनाई जाती है। यह वडा भारी दोष है। वहुतसे अनुभवियोंका कहना है कि ऐसे आटेकी रोटी नुकसान करती है। वाजारकी रोटियाँ तैयार करते समय चर्वीसे चुपड़ी जाती है; अत एव वे हिन्दू और मुसलमानोंके खाने योग्य नहीं रहतीं। घर पर वनाई हुई फुलकियों और रोटियोंको छोड़ कर वाजारकी रोटियोंसे पेट भरना केवल आलस्यकी निशानी समझनी चाहिए।

गेहूँके खानेका दूसरा उत्तम और सहज उपाय यह है कि गेहूँको मोटे मोटे दल कर उनका दलिया वनाना चाहिए। फिर इस दलियेको पानीमें खून वाफ कर उसमें दूध, घी, शक्कर मिला कर खाना चाहिए। इसका स्वाद भी अच्छा होता है और यह खूराक और खूराकोंसे अच्छी है।

चावलमें सत्त्व नहीं होता। इस विषयमें सन्देह है कि अकेले चावल पर मनुष्यका निर्वाह हो सकता है या नहीं। देखा गया है कि उनके साथ

दाल, घी, दूध आदि खाये जायँ तभी निर्वाह हो सकता है। गेहूँ एक ऐसी वस्तु है कि उन्हें केवल पानीमें सिझा कर खानेसे भी मनुष्य तन्दुरुस्त रह सकता है।

शाक-भाजी हम खास कर स्वादके लिए खाते हैं। उसका गुण रेचक है। अत एव वह कुछ अंशमें रक्तका सुधार करती है। परन्तु वह कठिनाईसे पचती है, क्योंकि वह एक प्रकारका घास ही है। इससे कोठेको ज्यादा काम करना पड़ता है। सबको अनुभव होगा कि जो शाक-भाजी ज्यादा खाते हैं उनके शरीरका गठन निर्बल होता है। उन्हें हम पोचे बतलाते हैं। उन्हें बार बार अपचा हो जाता है। वे अजीर्णकी दवा लिया ही करते हैं। यह हम अच्छी तरह देख सकते है कि कितनी ही शाक-भाजी तो बिलकुल घास ही है। इससे यह बात याद रखनी चाहिए कि शाक-भाजी खानी चाहिए, परन्तु बहुत ही कम।

चने, उड़द, मूँग, मोठ, मटर, मसूर, तूर आदिकी दाल बहुत भारी खूराक है। इसे पचानेमें बड़ी कठिनता पडती है। इसके लिए कोठेमें गहरी आग चाहिए। इन्हें खानेवाले मनुष्यको बार बार वायु सरता रहता है। इसका अर्थ यही है कि वे ठीक नहीं पचतीं। इन वस्तुओंमें यह गुण अवश्य है कि इनसे भूख देरमें लगती है—इन्हें खाकर मनुष्य ज्यादा समय तक रह सकता है। जिस मनुष्यको मजदूरी करनी पड़ती है उसके लिए इनका खाना ठीक हो सकता है, और उसे फायदा भी हो सकता है। परन्तु साधारणतया कम परिश्रम करनेवाले इन्हें ज्यादा नहीं खा सकते। मजदूर और गद्दी पर बैठनेवालोंकी खूराक समान नही हो सकती।

डाक्टर हेग इंगलैंडका प्रख्यात लेखक है। उसने बहुतसे प्रयोग करके सिद्ध कर दिया है कि दालवाली चीजें बहुत ही खराब है। इनसे हमारे शरीरमें एक प्रकारका एसिड विष पैदा होता है और उससे हमें बहुतसे

रोग पैदा हो जाते है, जिनके कारण हम जल्दी ही बूढे हो जाते है। ऐसा होनेके उसने बहुतसे कारण बतलाये हैं, जिन्हें यहाँ लिखनेकी आवश्यकता नहीं है। मेरा निजी अनुभव यह है कि इन वस्तुओंके खानेमें नुकसान ही है। इतने पर भी जिनसे स्वाद न छोड़ा जाय उन्हें ऐसी वस्तु विचार कर खानी चाहिए।

अब हमें इस बातका विचार करना चाहिए कि वनस्पतिमें कितनी वस्तुएँ छोडनेके योग्य है। हिंदुस्तानमें लगभग सब जगह मिरच, मसाला, धनिया, जीरा, कालीमिरच वगैरहके खानेकी बड़ी भारी चाल है। यह चाल और जगह नहीं हैं। यदि हम इस मसालेकी खूराक अफ्रिकाके हबसियोंको खिलावें तो वे भी एका एक इसे न खायेंगे, क्योंकि उन्हें यह बे-स्वाद मालूम होती है। बहुतसे गोरे—जिन्हें मसालेकी आदत नहीं है—हमारे मसालेदार भोजनको नहीं खा सकते और कदाचित् बे-वश उन्हें ऐसा भोजन करना ही पड़े तो उनका कोठा खराब हो जाता है और उनके मुँहमें छाले पड़ जाते हैं। कितने ही गोरोंके सम्बन्धमें यह मैंने स्वयं अनुभव किया है। इससे सिद्ध होता है कि मसाला स्वयं कुछ स्वादिष्ट नहीं है। परन्तु हमें बहुत कालसे जो उसके खानेकी आदत पड़ी हुई है, इस कारण हम उसकी गंध और स्वादको पसन्द करते है। परन्तु इस बातको तो हम समझ चुके कि स्वादके लिए मसाला खाना स्वास्थ्यको नुकसान पहुँचाता है।

तब हमें इस बातका पता लगाना चाहिए कि मसाला क्यों खाया जाता है। इस बातको सब स्वीकार करेंगे कि मसाला खानेका हेतु यही है कि खाना ज्यादा खाया जा सके और पचे भी ज्यादा। मिरच, धनिया, जीरा वगैरहमें यह खास गुण है कि वे हमारे पेटकी अग्निको अधिक उत्तेजित करते है; और इससे हमें विशेष भूख लगती हुई जान पड़ती है। परन्तु इसका यह अर्थ करना भूल है कि खाया हुआ भोजन

सवका सव पच जाता है और उसका उत्तम रक्त वन जाता है । वहु-तसे मनुष्योंका, जो वहुत मसाला खाते है, कोठा खराव हो जाता है और कितने हीको संग्रहणी भी हो जाती है । एक मनुष्यको वहुत मिरच खानेकी वड़ी भारी आदत थी । वह उसे छोड़ न सका और जवानीमें छः महीने विस्तर पर पड़ा रह कर अन्तमें मर गया । इस लिए अपनी खूराकमेंसे मसालेको निकाल देना ही कल्याणकारी है ।

जो वात मसालेके सम्वन्धमें कही गई है वही नमकके सम्वन्धमें भी कही जा सकती है। परंतु यह वात किसीको पसन्द न पड़ेगी। यहाँ तक कि वहुतोंको तो भयंकर जान पड़ेगी । परन्तु यह निश्चित है कि ऊपर जो कुछ मसालेके सम्वन्धमें कहा गया है वह अनुभव-सिद्ध है । विला-यतमें एक ऐसी मंडली हे, जिसका मत है कि नमक वहुतसे मसालोंसे भी खराव वस्तु है । हमारी खूराकमें हमें जितना वनस्पति-जन्य नमक मिलता हे वह काफी है और उतनेकी आवश्कता भी है; समुद्रका या खानका नमक आवश्यक नहीं है । यह जैसा शरीरमें जाता है वैसा ही पसीनेके रास्ते या अन्य मार्गसे वाहर निकल जाता है । इसका कोई खास उपयोग शरीरमें होता हुआ नहीं जान पड़ता । एक पुस्तकमें तो यहाँ तक लिखा है कि नमकसे रक्त विगड़ता है । जिसने वर्षोंसे नमक न खाया हो और अन्य भाँतिसे रक्तको विगड़ने न देकर स्वच्छ रक्खा हो उस पर साँपके काटनेका कुछ असर नहीं होता । उस रक्तमें ऐसे दंशोंके प्रभावको दूर करनेकी एक खास शक्ति होती है । इसे मैं नहीं जानता कि यह वात ठीक हे या नहीं, परन्तु इतना तो मै अपने अनुभवसे कह सकता हूँ कि खाँसी, अर्श, दम, रक्त-प्रवाह वगैरह वीमा-रियोंकी हालतमें नमक छोड़ दिया जाय तो उसका असर तत्काल होता है । एक हिंदुस्तानीको वहुत समयसे दम और खाँसीकी वीमारी थी । वह नमक छोड़ कर इलाज करनेसे मिट गई । मैने न सुना है और न

अनुभवसे जाना है कि नमक छोडनेसे किसी पर बुरा असर पड़ा हो। मुझे तो नमक छोड़े हुए दो वर्ष हो गये, परंतु उसका अब तक कोई बुरा असर नहीं पडा, बल्कि लाभ ही हुआ है। नमक न खानेसे पानी कम पीना पड़ता है और सुस्ती कम रहती है। मुझ पर नमक छोड़नेका जो प्रसंग आया था वह विचित्र ही था। जिसकी बीमारीके लिए मैने नमक छोड़ा था उसकी बीमारी सदा थँभी रही। यदि वह बीमार भी सर्वथा नमक छोड़ देता तो मेरा विश्वास है कि उसकी बीमारी बिलकुल अच्छी हो जाती।

नमक छोड़नेवालेको दाल और शाक-भाजी भी छोड़ देनी पड़ती है। मैने बहुतसे प्रयोगोंमें देखा है कि यह बात बहुत ही कठिन है। परन्तु नमकके त्यागीको हरी तरकारी और दाल छोड़े बिना काम नहीं चल सकता। क्योंकि नमकके बिना दाल-शाकका पचाना कठिन है। इसका यह मतलब नहीं है कि नमक पाचन-शक्तिको बढ़ानेवाली वस्तु है, परन्तु जैसे मिरच खानेसे पाचन-शक्ति बढ़ती नहीं—बढ़नेके जैसी जान पड़ती है—और अन्तमें नुकसान होता है, वही हाल नमकका भी है। नमक छोड-नेवालेको दाल-शाक अवश्य छोड देनी चाहिए। इस प्रयोगको सब कोई अपने ऊपर ही आजमा कर उसके असरको देख सकते हैं। जैसे अफीम छोडनेवालेको थोडे दिन तक कष्ट मालूम होता है और शरीर शिथिलसा जान पढ़ता है वैसा ही नमक छोडनेवालेको भी जान पडेगा। परन्तु इससे विचलित होनेकी कोई जरूरत नहीं है। धैर्य्य रखनेसे नमक छोड़-नेवालेको लाभ ही पहुँचेगा।

इस लेखकने दूधको भी छोड़ने योग्य वस्तुओंमें गिननेका साहस किया है। इसका कारण उसका निजी अनुभव है। परन्तु उस अनुभवके यहाँ पर जिकर करनेकी आवश्यकता नहीं। दूधके माहात्म्यके सम्बन्धमें हम लोगोंको एक ऐसा भ्रमसा हो गया है कि उसके निकालनेका यत्न करना

व्यर्थ है। इस लेखकको इस बातका भरोसा नहीं है कि इस पुस्तकमें बतलाये हुए विचारोंको पढनेवाले स्वीकार करेंगे, और न यही भरोसा है कि जिन्हें ये विचार पसन्द पडेंगे वे सब इन पर अमल करेंगे। लेखकका मतलब केवल विचारोंको प्रकट करना है। इनमेंसे जिन्हें जो विचार पसन्द पड़ें उन्हें वे ग्रहण करें। अत एव दूधके सम्बन्धमें भी लिखना अयोग्य नहीं जान पड़ता। बहुतसे डाक्टरोंने लिखा है कि दूध काल-ज्वर पैदा करनेवाली वस्तु है। इसके सम्बन्धमें बहुतसी पुस्तकें और मासिक पत्र निकलते हैं। दूधमें हवाके जन्तु तुरन्त पड़ जाते है और तुरन्त ही हानिकारक जन्तु पैदा हो जाते है। दूधको ठीक रखनेके लिए बहुतसी झंझटें उठानी पड़ती है। दक्षिण-अफ्रिकामें दूधके कारखानोंके सम्बन्धमें कई कानून बने हुए हैं कि दूधको कैसे स्वच्छ रक्खा जाय, बर्तन कैसे साफ किये जायँ, कैसे रक्खे जायँ इत्यादि। इस प्रकार जिस वस्तुके लिए बहुत यत्न करने पड़ें और कुछ भूल हो जाय तो नुकसान उठाना पडे तब ऐसी वस्तुको छोड़ना चाहिए या रखना चाहिए, यह बात विचार करने योग्य है।

इसके सिवा दूधका अच्छा या बुरा पना इस बात पर निर्भर है कि गाय कैसी है और वह क्या खाती है। क्षय-रोगसे पीड़ित गायका दूध पीनेसे क्षय हो जानेके उदाहरण अनेक डाक्टरोंने दिये हैं, और बिलकुल तन्दुरुस्त गायका मिलना कठिन है। यदि गाय तन्दुरुस्त न हो तो उसका दूध निरोग नहीं हो सकता। इस बातको सब जानते है कि बीमार माताके दूध पीनेवाले बच्चे भी बीमार हो जाते हैं। दूध पीनेवाले बच्चेको बीमारी होती है तो वैद्य बच्चेको दवा न देकर उसकी माको देते है। कारण कि दवाका असर दूधके द्वारा बच्चे पर हो जाता है। इसी तरह गायके दूधका उसके पीनेवाले पर असर पडता है। और उसी भाँति [illegible]के स्वास्थ्य और अस्वास्थ्यका भी प्रभाव उसके दूध पीनेवाले पर

पड़ता है । जिस दूधमें इतनी विटम्बनाएँ और इतनी जोखम है, क्या वह छोड़ने योग्य नहीं है ? शक्ति देनेका जो गुण दूधमें बताया गया है वह अन्य बहुतसी चीजोंमें है । कई अंशोंमें जैतूनके तैलसे इसकी गरज निकल सकती है । अथवा बादामकी मींगीको गरम पानीमें भिगो कर उन परके छिलकेको दूर कर देना चाहिए । फिर उन्हें पीस कर पानीमें मिला लेना चाहिए । इसमें दूधके सारे गुण होते हैं और दूधसे उत्पन्न होनेवाली खराबियाँ नही होतीं । अच्छा, अब कुदरतके नियमकी ओर भी ध्यान दीजिए । बछड़े थोड़े ही महीने दूध पीकर छोड़ देते हैं और दाँत आते ही ऐसी चीजोंका खाना शुरू कर देते हैं जो दाँतोसे खाई जा सके । यही बात मनुष्य-जातिके लिए भी होनी चाहिए । हम केवल बचपनमें दूध पीनेको बने हैं । हमारे दाँत आ जायँ तब हमें सेव वगैरह हरा मेवा और बादाम वगैरह सूखा मेवा या रोटी चबानी चाहिए । इस बातके निर्णय करनेका यह स्थान नहीं है कि दूधकी गुलामीसे छूटनेवाला मनुष्य कितना पैसा और समय बचा सकता है । परन्तु इस बातका मनुष्य स्वयं निर्णय कर सकते हैं कि दूधसे पैदा होनेवाली चीजोंकी भी आवश्यता नहीं है । छाछकी खटाई नींबूके सेवनसे मिल सकती है, उसके अन्यान्य सत्व बादाम वगैरहसे मिल सकते हैं और घीकी एवजमें तैलका उपयोग तो हजारों भारतवासी करते हैं ।

अब तीसरे दर्जेकी खूराकको लीजिए । यह वनस्पति और मांसके मेलकी खूराक है । इस खूराकको बहुतसे मनुष्य खाते हैं । उनमें बहुतसे अनेक रोगोंसे पीडित है और बहुतसे निरोग भी देख पडते है । इस बातको हमारे अवयव और हमारी शरीर-रचना भी प्रत्यक्ष दिखला रही है कि हम मांस खानेके लिए पैदा नहीं हुए । डाक्टर किंग्सफोर्ड और डाक्टर हेगने इस बातका वर्णन अच्छी तरह किया है कि मांस खानेसे शरीर पर बुरा असर पड़ता है । दाल खानेसे जो एसिड पैदा होता है

वही मांस खानेसे भी होता है । मांस खानेसे दाँतोंको नुकसान होता है, सन्धि-वात होता है और क्रोध खूब चढ़ने लगता है । जिस मनुष्यको क्रोध आता है वह भी रोगी ही है । हमारी आरोग्यकी व्याख्याके अनुसार क्रोधी मनुष्य निरोगी नहीं कहा जा सकता ।

चौथे और अन्तिम दर्जेकी खूराक खानेवाले केवल मांसभोजी होते है । उनके विषयमें विचार करनेकी कोई आवश्यकता नहीं । उनकी दशा इतनी खराब होती है कि जिसका विचार करने पर हम कभी मास नहीं खा सकते । मांस खानेवाले किसी तरह निरोगी नहीं कहे जा सकते । वे जरा उन्नत होते हैं या ज्ञान प्राप्त करते हैं कि तुरंत उनका चित्त वनस्पतिके आहारकी ओर दौड़ता है ।

इन सब बातोंका सार यह है कि केवल फलाहार करनेवाले थोड़े ही लोग निकलेंगे । परन्तु हरे और सूखे फल, गेहूँ और ओलिव-आइल-का प्रयोग करने योग्य है । इस पर मनुष्य अपनी तन्दुरुस्ती कायम रख सकता है । फलोंमें केले मुख्य है । इसके सिवाय खजूर, आलूबुखारे, अंजीर आदि ये सब शक्ति देनेवाले पदार्थ हैं । अंगूर खून सुधारते हैं । नारंगी, सन्तरे, सेव और केले एकत्र कर रोटियोंके साथ खाये जा सकते हैं । जैतूनके तैलसे चुपड़ी हुई रोटियोंका स्वाद खराब नही होता । ऐसी खूराकमें अडचन कम होती है और खर्च भी कम होता है । इसके सिवाय नमक, मिरच, दूध या शक्करकी जरूरत भी नहीं पड़ती । कोरी शक्कर खाना तो बिलकुल खराब है । बहुत मीठा खानेवालेके दाँत शीघ्र गिर जाते हैं । ज्यादा मीठेसे कुछ लाभ भी नहीं होता । गेहूँ, बादाम, मूँगफली, अखरोट और हरे मेवेसे अनेक खाने योग्य पदार्थ बनाये जा सकते है ।

अब इस बात पर विचार करना चाहिए कि खूराक कितनी और कितनी बार खानी चाहिए । इस विषयका अगले प्रकरणमें हम विचार करते हैं ।

खूराक कितनी और कितनी वार खानी चाहिए।

डाक्टरोंका इस विषयमें वड़ा मतभेद है कि खूराक कितनी खानी चाहिए। एक डाक्टरका कहना है कि खूराक खूब खानी चाहिए। उसने अलग अलग खूराकके उनके गुणोंके अनुसार वजन दिये हैं। दूसरे डाक्टरका कहना है कि मजदूरी करनेवाले और मानसिक श्रम करनेवालेको जुदी जुदी जातिकी खूराक जुदे जुदे परिमाणमे खानी चाहिए। तीसरेका कहना है कि क्या मजदूर और क्या धनी, दोनोंकों समान खूराक खानी चाहिए। यह कोई नियम नहीं है कि गादीधर थोड़ी और मजदूर लोग ज्यादा खूराक खावें तभी उनका काम चल सकता है। इस वातको तो सभी जानते हैं कि सवल और निर्वलकी खूराकका वजन एक नहीं हो सकता। स्त्री और पुरुषके आहारमें भेद होता है। वड़ों और वच्चोंके आहारमें भेद होता है। जवान और बूढोंके आहारमें अन्तर होता है। अन्तके एक लेखकका तो यहाँ तक कहना है कि यदि खूराकको हम इतना चवा कर खावें कि वह विलकुल रस होकर थूँककी भाँति अपने आप गले उतर जाय तो हमारा काम ८–१० तोले खूराकसे ही चल सकता है। इस लेखकने ऐसे हजारों प्रयोग करके देखे हैं। उसकी पुस्तकोंकी हजारों प्रतियाँ विकती हैं और लोग उन्हें बहुत पढते है। ऐसी स्थितिमें कितना खाना चाहिए इसका वजन बतलाना व्यर्थ है।

प्राय यह सव डाक्टरोंने लिखा है कि $\frac{९९}{१००}$ मनुष्य आवश्यकतासे अधिक खाते हैं। उन्होंने न लिखा होता तो भी यह वात ऐसी साधारण है कि हम स्वयं भी समझ सकते थे। ऐसी सूरतमें इस भयसे कि कोई कम खाकर अपनी तवीयतको खराव न कर ले, इसके कहनेकी आवश्यकता नहीं है कि कमसे कम कितना खाना चाहिए। किंतु वास्तवमें यह कहनेकी आवश्यकता है कि जव हम खूराकके विषयमें विचार कर रहे हैं तव अपनी खूराकको हमें कम ही करनी चाहिए।

ऊपर लिखे अनुसार खूराकको खूब चबा कर खानेकी बहुत आवश्यकता है। ऐसा करनेसे बहुत थोडी खूराकमेंसे हम अधिकसे अधिक सत्व ग्रहण कर सकेंगे और हमें हर तरहसे लाभ होगा। यह बतलाया गया है कि जो मनुष्य पच जानेके जितनी ही खूराक खाता है उसका दस्त थोड़ा बँधा, कालोस लिया हुआ, चिकना, सूखा और दुर्गन्धसे बिलकुल रहित होता है। जिसे ऐसा दस्त नहीं होता समझना चाहिए कि उसने ज्यादा और अयोग्य खूराक खाई है, और उसे खूब अच्छी तरह चबा-चबा कर थूँकके ऐसी नहीं बनने दिया है। इस तरह मनुष्य अपने दस्त आदिसे जान सकता है कि उसने ज्यादा खाया है या कम। जिसने ज्यादा खाया होता है उसे सोते समय बेचेनी रहती है, स्वप्न आते है और प्रातःकाल उसकी जीभ बिगड़ी हुई होती है। जो प्रवाही पदार्थोंको बहुत खाता या पीता है उसे रातमें पेशाब करनेको बहुत बार उठना पडता है। इस तरह बारीकीके साथ देख कर मनुष्य अपनी अपनी खूराकका वजन स्वयं कर सकते हैं। बहुतसे मनुष्य ऐसे होते हैं जिनके श्वासमें बदबू होती है, समझना चाहिए उन्हें नियमसे खूराक हजम नहीं हुई है । कितनी ही बार देखा गया है कि ज्यादा खानेवालोंके फोड़े-फुंसी हो जाते है, खीलें निकला करती है, नाकमें फुंसी हो जाती हैं । परंतु इन उपद्रवोंकी वे परवा नहीं करते। कितनेको डकारें आया करती है और कितने हीको वायु सरा करती है । इन सब बातोंका अर्थ यह हुआ कि हमारा पेट पाखाना हो गया है और हम पाखानेकी पेटीको अपने साथ-साथ लिये फिरते है । यदि हमें अवकाश हो और हम इन बातों पर विचार करें तो हमें अपनी आदतों पर घृणा उत्पन्न हुए बिना न रहेगी। हम ज्यादा खाना सर्वथा छोड़ देंगे और खाने-पीने तथा ज्यौनारोंकी बात भी न करेंगे। हमारी मेहमानदारी और ही प्रकारकी हो जायगी और हम स्वयं सुखी

रह कर मेहमानको सुखी बना सकेंगे । दावतका तो फिर हम नाम भी न लेंगे । हम दतौन करनेके लिए किसीको न्यौता नहीं देते और न पानी पीनेके लिए ही किसीको न्यौता देते हैं । उसी भाँति भोजन करना भी एक शारीरिक व्यवहार है, फिर इसके लिए हमें क्यों आकाश-पाताल एक करना चाहिए ? मेहमान आये कि हमारी और मेहमान दोनोंकी कमवख्ती आ जाती है । यह क्यों ? इसका उत्तर यह है कि हमने अधिक खानेकी आदतोंसे अपने मुँह विगाड लिये हैं । इस कारण हम कुछ न-कुछ खानेके वहाने ढूँढते रहते हैं । मेहमानको खूब भोजन करा कर उसके यहाँ खूब खानेकी इच्छा करते हैं । और एक बात है कि हम ऐसे-ऐसे मौके ढूँढ कर भी खूब खानेकी इच्छा करते है । इस तरह खानेके एक घंटे बाद ही यदि हम अपना मुँह किसी स्वस्थ शरीरवालेको सूँघनेके लिए कहें और उसके विचार सुनें तो हमें लज्जित होना पड़ेगा । बहुतसे ऐसे भी शौकीन खानेवाले है जो अच्छा खानेके लिए भोजन करनेके बाद तुरंत फ्रूटसाल्ट पियेंगे और उलटी करके फिर खानेको बैठ जायँगे !

हम सवकी थोडी या बहुत ऐसी ही दशा है । इस लिए हमारे महा-पुरुषोंने हमारे लिए उपवास या रोजे आदि व्रत बतलाये है । रोमन-कैथ-लिक क्रिश्चियनोंमें भी बहुतसे उपवास हैं । केवल शरीरके आरोग्यके लिए ही यदि मनुष्य हर एक पक्षमें उपवास या एकाशन करे तो भी कुछ बुरा नहीं है, उसे बड़ा ही फायदा होगा । चौमासेमें बहुतसे हिन्दू एक बार खानेका व्रत लेते हैं । इसमें आरोग्यका रहस्य भरा हुआ है । जब हवामें नमी हो, सूर्य न देख पड़ता हो तब कोठा कम काम करता है । अतएव ऐसे समयमें कम ही खाना चाहिए ।

अब हम इस बातका विचार करते हैं कि कितनी बार खाना चाहिए। हिन्दुस्तानमें प्रायः मनुष्य दो ही बार खाते है । कुछ लोग ऐसे भी हैं जो तीन बार खाते हैं । वे मजदूर लोग हैं । और जो चार बार खानेवाले हैं

जान पड़ता है वे अँगरेजी दवा चलनेके बाद पैदा हुए हैं । हालमें अमेरिका और इंग्लैंडमें ऐसी सभायें स्थापित हुई हैं, जिनका काम यह है कि वे मनुष्योंको दो बारसे ज्यादा न खानेका उपदेश दें । इन सभाओंका कहना है कि हमें सुबहका कलेवा न करना चाहिए । रातकी निद्रा ही कलेवेका काम करती है । प्रातःकालके समय हम भोजन करनेके लिए नहीं, किन्तु काम करनेको तैयार होते हैं । उनका मन्तव्य है कि एक पहर काम कर चुकने बाद ही हम खाने योग्य होते हैं । ऐसे मनुष्य दिनमें दो बार ही खाते हैं । वे बीचमें चाय आदि भी नहीं पीते । इस विषय पर प्रसिद्ध डॉक्टर ड्यूईने एक पुस्तक लिखी है । उसमें उन्होंने कलेवा छोडने, कम खाने और उपवास करनेके लाभ बडी अच्छी तरह बतलाये है । आठ वर्षसे मेरा भी यही अनुभव है कि युवावस्थाके बाद दो बारसे ज्यादा खानेकी बिलकुल जरूरत नहीं है । मनुष्यके शरीरका संगठन हो चुकनेके बाद न उसे बहुत बार खानेकी आवश्यकता है और न बहुत खानेकी ही आवश्यकता है ।

---

६ कसरत ।

मनुष्य-जातिके लिए हवा, पानी और खूराककी जितनी जरूरत है उतनी ही जरूरत कसरतकी भी है । इतना सही है कि कसरतके बिना आदमी जितने काल तक रह सकता है उतने काल तक हवा, पानी और खूराकके बिना नहीं रह सकता; तथापि इसे सब लोग मानते हैं कि कसरतके बिना वह निरोग नहीं रह सकता । ऊपर जैसा हमने खूराकका अर्थ किया है वैसा ही कसरतका अर्थ करना चाहिए । गिल्ली-दंडे, फुटबॉल, क्रिकेट या घूमनेको ही कसरत नहीं कहते, किन्तु शारीरिक और मानसिक काम करनेको कसरत कहते हैं । जैसे शरीर और मन दोनोंके लिए खूराककी आवश्यकता है वैसे ही दोनोंके लिए कसरत

भी आवश्यक है। शरीर कसरत न करने पर बीमार रहेगा और मन कसरत न करने पर शिथिल रहेगा। मूर्खताको एक प्रकारका रोग ही समझना चाहिए। एक बड़ा भारी पहलवान जो खूब कुश्ती कर सकता है, परन्तु यदि उसका मन गँवारके जैसा हो तो हम उसे निरोगी नहीं कह सकते। अँगरेजीमें एक कहावत है कि उसी मनुष्यको निरोग कहना चाहिए कि जिसके तन्दुरुस्त शरीरमें मन दृढ और आरोग्य हो।

ऐसी कसरतें कौनसी है ? इसका उत्तर यह है कि कुदरतने तो हमारे लिए ऐसा अच्छा प्रबन्ध किया है कि हम सदा ही कसरत करते रहें। जरा शान्तिके साथ देखें तो हमें मालूम होगा कि संसारका बहुत बड़ा भाग खेती पर निर्वाह करता है। किसानके सब घरवाले कसरत करते हैं। वे प्रति दिन आठ-दस घंटे या इससे भी ज्यादा समय तक खेतोंमें काम करें तभी उन्हें खाने-पीने और पहननेको मिलता है। उन्हें दूसरे मानसिक व्यायामकी आवश्यकता नहीं पडती; क्योंकि किसान मूर्ख दशामें काम ही नहीं कर सकता। उसे जमीनकी परख और ऋतुओंके फेरफारका ज्ञान होना ही चाहिए, युक्ति-पूर्वक हल चलानेकी योग्यता और साधारणतया सूर्य, चन्द्र और ताराओंकी गतिसे जानकारी होनी ही चाहिए। शहरका रहनेवाला मनुष्य चाहे जैसा बुद्धिमान् क्यों न हो वह जब किसानके घर जाता है तब अपनेको अत्यन्त ही अनभिज्ञ पाता है। किसानको अच्छे-बुरे बीजकी पहचान होती है, उसे आस-पासके रास्तोंका ज्ञान होता है, आसपासके मनुष्योंको वह पहचानता है, तारोंको देख कर रातमें दिशा बतला सकता है और पशु-पक्षियोंकी गति और आवाजसे कितनी ही बातोंको समझ लेता है। अमुक पक्षी अमुक समयमें इकट्ठे हों या कलोल करें तो वह कहेगा कि ये वर्षाके चिह्न है या कुछ और चिह्न है। इस तरह किसान अपने कामके लायक खगोल, भूगोल, भूस्तर आदि कई विद्यायें जानता है। वह अपने बाल-बच्चोंका

भरण-पोषण करता है, अत एव मानव-धर्म-शास्त्रका भी उसे साधारण ज्ञान रहता है । इस पृथ्वीके विशाल भागमें वह रहता है, अत एव ईश्वरके महत्त्वको भी समझता है । शरीरसे वह दृढ होता ही है । अपना इलाज वह आप ही कर लेता है । इसके सिवाय मानसिक शिक्षा उसे जैसी मिली हुई होती है वह ऊपर लिखा ही जा चुका है ।

परन्तु किसान ही सब कुछ नहीं हैं और ये प्रकरण किसानोंके उपकारके लिए लिखे भी नहीं गये है । सवाल यह है कि जो व्यापारी या ऐसे ही अन्य धधे करनेवाले है उन्हें क्या करना चाहिए ? इस सवालका अच्छी तरह जवाब दिये जानेके लिए ही किसानोंकी जिन्दगीका वर्णन किया गया है । जो किसान नहीं है वे भी अपने जीवनको ऐसा बना सकते है और यह भी समझ सकते है कि जब तक हमारा जीवन ऐसा न होगा तब तक हम पूर्ण निरोग नहीं हो सकते । किसानके जीवनसे हम यह बात जान सकते हैं कि मनुष्यको आठ घंटे तक शारीरिक श्रम करना चाहिए, और वह ऐसा होना चाहिए कि जिसके करते करते ही मनकी भी कसरत हो जाय । व्यापारी आदि लोगोंको कुछ मनकी कसरत करना पडती है; परन्तु वह एक ही तरहकी होती है । क्योंकि ये लोग किसानकी तरह खगोल, भूगोल, इतिहास आदिके वेत्ता नहीं होते । इन्हें भाव आदिका ज्ञान हो सकता है, ये माप-तोल जान सकते हैं, ग्राहकोंको युक्ति-पूर्वक माल देनेकी कला सपादन कर सकते है, परन्तु इन बातोंसे पूरे तौर पर मनकी कसरत नहीं होती । इन धंधोंमें कुछ शरीरकी हल-चल होती है, परन्तु वह बहुत ही कम ।

ऐसे मनुष्योंके लिए पश्चिमके लोगोंने क्रिकेट आदि कई प्रकारके खेल खोज निकाले है । इनके सिवाय त्यौहारोंके समय विशेष विशेष खेल भी खेले जाते हैं । मानसिक कसरतके लिए बतलाया गया है कि ऐसे ग्रंथ पढ़ने चाहिए जो सरलतासे समझमें आ सकें । आइए, इन खेलोंके

विषयमें हम भी जरा विचार करें। इसमें सन्देह नहीं है कि इन खेलोंमें समय लगानेसे कसरत होती है; परन्तु मनका सुधार नहीं होता। इस बातको हम अनेक उदारणोंमें देख सकते है। क्रिकेट या फुटबॉलके खिलाडियोंकी संख्याके परिमाणमें कितने ऐसे मनुष्य है जो उत्तम मानसिक शक्तिवाले है? हिंदुस्तानके राजे बडे खिलाड़ी है; उनके मानसिक बलके सम्बन्धमें हमने क्या देखा है? और जो बड़े भारी मानसिक शक्तिवाले है उनमें कितने मनुष्य खिलाड़ी है? अनुभवसे जाना जाता है मानसिक शक्तिवाले बहुत ही कम खिलाड़ी देखनेमें आवेंगे। विलायतके गोरे अब खूब खेलने लगे हैं। परंतु उन्हें उन्हींके कवि किप्लिगने बुद्धिके शत्रु कह कर वर्णन किया है, और कहा है कि ये इंगलैडके दुश्मन होंगे। हिंदुस्तानके मानसिक शक्तिवालोंने दूसरा ही मार्ग ग्रहण किया जान पडता है। वे जितना मानसिक श्रम करते हैं उसकी तुलनामें शरीरकी बहुत ही कम कसरत करते हैं, या बिलकुल ही नहीं करते। परिणाम यह होता है कि ऐसे लोगोंसे असमयमें ही हमें हाथ धो बैठना पड़ता है। केवल मस्तिष्क पर भार लादनेके कारण उनके शरीर क्षीण हो जाते हैं और उनके शरीरमें कोई-न-कोई रोग घर कर बैठता है। जब उनका अनुभव देशके काम आने लगता है तब वे देह त्याग कर चल बसते है। इससे हम जान सक्ते है कि अकेली मनकी या शरीरकी कसरतसे काम नहीं चल सकता। इसी तरह खेलमें जो निरुपयोगी कसरत होती है, योग्य नहीं समझी जा सकती। सच्ची कसरत तो वही है जिसमें तन और मन दोनोंका निरंतर विकास होता रहे। ऐसी कसरत करनेवाला मनुष्य ही तन्दुरुस्त रह सकता है और ऐसा मनुष्य किसान है।

अब जो किसान नहीं है उन्हें क्या करना चाहिए? ऊपर यह बतलाया जा चुका है कि क्रिकेट, फुटबॉल आदि खेलोंसे होनेवाली कसरत अच्छी नहीं है। अत एव हमें कोई ऐसी कसरत खोज निकालनी

चाहिए कि जिससे किसानके जैसी शारीरिक और मानसिक कसरत हो जाया करे । इसके लिए व्यापारी और दूसरे लोग अपने घरके आस-पास बगीचा बना कर उसमें रोज दो चार घंटे खोदने आदिका काम कर सकते हैं । फेरीवाले आदि लोगोंके लिए उनके धंधेमें ही ऐसी कसरत हो जाती है । यदि हम दूसरेके घरमें रहते हों तो यह सवाल ही न उठाना चाहिए कि हम दूसरोंके घरमें क्यों खोदनेकी मेहनत करें और बगीचा लगावें । ऐसे विचार तुच्छ मनवालोंके होते हैं । हमें याद रखना चाहिए कि चाहे जिसकी जमीनमें हम खोदने-बोनेका काम करें, हमें तो लाभ ही होगा । यदि वे हमारे घर होंगे तो सुधर जायँगे और दूसरोंके घर होंगे तो उन्हें साफ-सुथरे रखनेका हम संतोष प्राप्त कर सकेंगे । जिन्हें इस प्रकारकी जमीनकी कसरत करनेका योग न मिले या जिन्हें ऐसी कसरत पसन्द न हो तो उनके लिए यहाँ दो शब्दोंके कहनेकी आवश्यकता जान पड़ती है । जमीनमें काम करनेकी कसरतके सिवाय सर्वोत्तम कसरत चलने फिरनेकी है । यह सब कसरतोंकी राजा है । हमारे फकीर और साधु बहुत तन्दुरुस्त रहते हैं । उनके तन्दुरुस्त रहनेके कारणोंमें एक यह भी कारण है कि वे गाड़ी-घोड़े आदि सवारियोंका उपयोग नहीं करते । वे अपनी यात्रा पैरोंसे करते हैं । थोरो नामके एक प्रसिद्ध अमेरिकनने चलने फिरनेकी कसरत पर बहुत ही विचार करने योग्य पुस्तक लिखी है । उसने लिखा है कि जो मनुष्य समय न मिलनेके बहाने बाहर नहीं निकलता, चलता-फिरता नहीं है और सदा लिखने-पढ़नेके काममें लगा रहता है उसके लेख आदि भी वैसे ही मुर्दार होते हैं जैसा कि वह मुर्दार—बीमार-सा—रहा करता है । उसने स्वयं अपने अनुभवके विषयमें लिखा है कि "जिस समय मैं बहुत अधिक चलता था तभी मैंने उत्तम उत्तम पुस्तकें लिखी है । चार-पाँच घंटे चल लेना तो मेरे लिए कोई बात ही न थी" । जिस भाँति खूब भूख लग आने पर हम कोई काम नहीं कर सकते उसी भाँति कसरत किये बिना भी हमें कोई काम न करना

चाहिए । हमें मानसिक कामोंका माप करना नहीं आता, इससे हम नहीं देख पाते कि शारीरिक कसरतके बिना किये मानसिक काम नीरस और निःसत्व होते हैं । चलनेसे रक्त सब भागोंमें शीघ्रतासे चक्कर लगाने लगता है, प्रत्येक अंगमें हलन-चलन होती है और सारा शरीर कसाता है । चलनेसे हाथ पैर तो हिलते ही हैं, इसके सिवाय हमें शुद्ध हवा मिलती है और उत्तमोत्तम दृश्य भी देख पडते हैं । हमें केवल गलीमें या एक ही जगह न घूमना चाहिए, किन्तु खेतोंमें या जंगलमें घूमना चाहिए । इससे हम प्राकृतिक सौन्दर्यकी कुछ कीमत कर सकेंगे । एक-दो मील चलना कुछ चलना नहीं है, दस-बारह मील चलना ही कुछ चलना कहा जा सकता है । जो लोग ऐसा सदा नहीं कर सकते वे रविवारको खूब चल सकते हैं । एक बीमार एक अनुभवी वैद्यके यहाँ दवा लेनेको गया । उसे अजीर्णका रोग था । वैद्यने उसे सलाह दी कि तुम थोडे-थोड़े घूमा करो । बीमारने कहा कि मुझमें शक्ति नहीं है । वैद्यने समझा कि बीमार कम हिम्मत है । तब वह स्वयं उस बीमारको अपने साथ गाड़ीमें बैठा कर घूमनेको ले गया । थोड़ी दूर जाकर रास्तेमें जान-बूझ कर वैद्यने चाबुक गिरा दिया । सभ्यताके लिहाजसे बेचारा बीमार चाबुक लेनेको उतरा । इतनेमें वैद्यने गाडी तेज कर दी । लाचार बीमारको हाँपते-हाँपते गाडीके पीछे पीछे जल्दी चलना पड़ा । बीमारको खूब चला लेनेके बाद वैद्यने गाड़ीको लौटा कर उसमें बीमारको बिठला लिया और कहा कि तुम्हारे रोगका इलाज चलाना ही था, इसी लिए तुम्हारे साथ मैंने ऐसा निर्दय व्यवहार किया है । उस समय चलनेमें अधिक श्रम पड़नेके कारण बीमारको भी बहुत जोरकी भूख लग आई थी । इस लिए वह वैद्यके उस निर्दय व्यवहारको भूल कर तथा उसका उपकार मान कर अपने घर गया और बड़े संतोषसे उसने भोजन किया । जिन्हें बदहज्मी और उससे होनेवाले रोग हों उन्हें चाहिए कि वे चलनेके प्रयोगको आजमा देखें ।

---

७ पोशाक

जिस भाँति खूराक पर स्वास्थ्यका आधार है उसी भाँति कई अंशोंमें पोशाक पर भी है। गोरी औरतें अपनी शोभाके लिए ऐसी पोशाक पहनती हैं कि जिससे उनके पैर और कमर तंग रहें । इससे उन्हें कई प्रकारकी बीमारियाँ हो जाती हैं। चीनमें औरतोंके पैर इतने छोटे कर दिये जाते हैं कि हमारे बच्चोंके पैर भी उनके पैरोंसे बड़े होते हैं। इससे चीनकी औरतोंके स्वास्थ्यको बड़ा धक्का पहुँचता है। इन दो उदाहरणोंसे पढनेवाले समझ सकते हैं कि कुछ अंशमें हमारे स्वास्थ्यका आधार पोशाक पर भी है। बहुत अंशोंमें पोशाकका पसन्द करना हमारे हाथमें नहीं रहता। हम अपने बड़े-बूढोंकी पोशाक पहनते हैं और वर्तमानमें ऐसा करनेकी जरूरत भी है। पोशाकका मुख्य उद्देश क्या है, उसे भूल कर अब पोशाकसे हमारा धर्म, हमारा देश और हमारी जाति आदि जाने जाते है। मजदूर, मास्टर, कारबारी आदिकी पोशाक भी जुदी ही जातिकी होती है। ऐसी स्थितिमें आरोग्यके सम्बन्धमें विचार करना कठिन बात है; तथापि विचार करनेसे कुछ लाभ ही होगा।

पोशाक शब्दमें जूते और जेवरका भी समावेश समझना चाहिए। अब हम देखें कि पोशाकका मूल हेतु क्या है। अपनी प्राकृतिक स्थितिमें मनुष्य बिलकुल वस्त्र नहीं पहनता, स्त्री-पुरुष केवल अपने गुह्य भागको ढक लेते है, बाकी सारा शरीर खुला रखते हैं। इससे उनका चमड़ा कठिन और मजबूत हो जाता है, उन्हें एकाएक सरदी आदि नहीं होती। हवाके प्रकरणमें लिखा जा चुका है कि हम नथुनोंसे ही हवा नहीं लेते, किन्तु त्वचाके असंख्य छिद्रोंसे भी हवा लेते है। तब कहना चाहिए कि पोशाक पहन कर हम ...के इस काममें बाधा पहुँचाते हैं। शीत-प्रधान देशके मनुष्य

ज्यों ज्यों आलसी होते गये त्यों त्यों उन्हें शरीके ढकनेकी आवश्यकता जान पड़ी। वे ठंडको सहन न कर सके, और आखिरमें पोशाकका रिवाज चल पड़ा। इसके बाद लोगोंने उसे शृगार समझ लिया और फिर इससे जातिकी पहचान होने लगी।

वास्तवमें देखा जाय तो प्रकृतिने चर्मके रूपमें मनुष्यको योग्य पोशाक पहनाई है। यह मानना हमारा भ्रम मात्र है कि नग्न शरीर कुरूप देख पड़ता है। सर्वोत्तम सौंदर्यके चित्र तो नग्न दशामें ही देखे जाते हैं। पोशाकके द्वारा साधारण अंगोंको ढक कर हम मानों प्रकृतिके दोषों-को दिखला रहे है। जैसे जैसे हमारे पास ज्यादा पैसे होते जाते है वैसे वैसे ही हम अपनी सजावट बढाते जाते हैं। सभी किसी-न-किसी भॉति रूपवान बनना चाहते हैं और बन कर काचमें मुँह देख प्रसन्न होते हैं कि वाह मैं कैसा सुन्दर हूँ! बहुत दिनोंके ऐसे ही अभ्याससे अगर हमारी दृष्टि खराब न हो गई हो तो हम देख सकेंगे कि मनुष्यकी सबसे श्रेष्ठ सुन्द-रता उसकी नग्नावस्थामें ही है और उसीमें उसका आरोग्य है। पोशाक जितनी ही अधिक पहनी जायगी उतनी ही अधिक सुन्दरता नष्ट होगी। स्त्री-पुरुषोंको अपनी सुन्दरता बढानेके लिए इतने कपडे-लत्ते भी बस न हुए, सो वे गहने पहनने लग गये। कई पुरुष पैरोंमें कड़े, कानोंमें मुरकी और हाथमें अँगूठी पहनते है। ये सब गन्दगीके घर हैं, और यह समझना सहज नहीं है कि इनमें शोभा क्या है। औरतोंने तो हद ही कर दी है। पॉवोंमें—पैर भी न उठ सकनेके जितने भारी कडे, लंगर; कानोंमें—बालियॉ, कर्णफूल, पत्ते, नाकमें—लौंग, नथ, गलेमें—ठुस्सी, चन्द्रहार और हाथोंमें—पोंची, चूड़ी, बाजूबंद आदि जितने जेवर हों उतने ही कम हैं! इन्हें पहन कर वे शरीर पर खूब मैल चढ़ाती है। कान और नाकमें तो मैलकी हद ही नहीं रहती। इस मैली दशाको शृंगार समझ कर हम पैसेको उड़ाये देते हैं। चोरोंके भयसे जीवको जोखममें डालते हुए भी नहीं डरते। सच्ची बात तो यह है कि अनेक दुःख पाकर भी

हम अभिमानसे उत्पन्न हुई मूर्खताके लिए बे-हद खर्च करते हैं। कानोंमें घाव हो जाने पर भी स्त्रियोंने अपने पत्ते नहीं निकालने दिये। हाथमें फोड़े हो जायँ, हाथ सड़ जायँ, परन्तु चूड़ी नहीं निकल सकती। उँगली भले ही पक जाय, परन्तु हाथसे अँगूठी निकल जाय तो स्त्री-पुरुषकी सुन्दरतामें कमी पड़ जाय! ऐसी ऐसी बातें तो बहुतोंने अपनी आँखों देखी होंगी।

पोशाकके सम्बन्धमें बहुत कुछ सुधार करना कठिन है, परन्तु यदि हम चाहें तो जेवर और जरूरतसे ज्यादा कपड़ोंको बिदा कर सकते हैं। रीति-रवाजका अनुसरण करनेके लिए कुछ कपड़ोंको रख कर शेष कपड़े छोड़ सकते हैं। जो मनुष्य इस भ्रमसे छूट गया है कि पोशाक मनुष्यका भूषण है वह बहुत कुछ सुधार कर अपने आरोग्यकी रक्षा कर सकता है।

अब एक ऐसी हवा चल पड़ी है कि हमें योरपकी पोशाक पहननी चाहिए। इससे हमारा रोब जमेगा और लोग हमें आदरकी दृष्टिसे देखेंगे। इन सब बातोंका विचार करनेके लिए यह स्थान नहीं है। यहाँ तो इतना ही कहना आवश्यक है कि योरपकी पोशाक योरपके जैसे ठंढे देशके लिए भले ही योग्य हो हो, परन्तु हिन्दुस्तानके हिन्दू और मुसलमानके लिए तो हिन्दुस्तानकी पोशाक ही उचित है। हमारे कपड़े ढीले होनेसे उनके भीतर हवा आ-जा सकती है और सफेद होनेसे उनमें सूर्यकी किरणें इकट्ठी नहीं होतीं—बिखर जाती हैं। इनके अतिरिक काले रंगके कपड़ोंमें सदा सूरजकी विशेष गरमी मालूम होती है; क्योंकि उनमेंसे सूर्यकी किरणें बिखर नहीं सकतीं।

हम माथेको प्राय ढके रहते है, और नहीं तो बाहर जाते समय तो जरूर ही ढक लेते हैं। पगडी तो एक तरह हमारी पहचान ही हो गई है। इतने पर भी जहाँ पर सिरके खुले रखनेका सुभीता हो वहाँ सिर खुला रखनेमें ही फायदा है। नई सभ्यताने भारतमें एक और फैशनको जनम

दिया है। लोग साहब लोगोंकी भाँति वाल बढ़ा कर उनमे पट्टियाँ पाड़ते हैं, उन्हें खूब सजाते हैं, परंतु यह सब निरा जंगलीपन ही है। बढ़ाये हुए वालोंमें धूल, मैल और लीखें हो जाती हैं। सिरमें फोड़े हो जायँ तो उनका इलाज करना कठिन हो जाता है। पगड़ी पहननेवाला मनुष्य साहब लोगोंकी तरह यदि वाल बढ़ावे तो यह सरासर बेवकूफी ही है।

पगके द्वारा भी हम बहुतसी बीमारियोंके पंजेमें फँस जाते हैं। बूट वगैरह पहननेवालेके पैर कोमल हो जाते हैं। उनमें पसीना निकलने लगता है और बदबू देता है। जो मनुष्य वासको परख सकता है वह बूट पहननेवाले मनुष्यके पास बूट और मौजे खोलते समय खड़ा नहीं रह सकता। क्योंकि उसके पैरसे बड़ी बुरी बदबू निकलती है। हमारे यहाँ जूतेको पगरखी कहते है। इस लिए यदि हमें काँटोंमें चलना हो, बहुत धूपमें चलना हो या जाड़ेमें चलना हो तो उसके उपयोग करनेकी आवश्यकता है। वह भी सारे पैरको ढकनेकी जरूरत नहीं है, केवल तलोंके ढकनेकी जरूरत है। इससे सिद्ध हुआ कि जरूरतके समय हमें केवल सैंडल पहनने चाहिए। जिसका सिर दुखता हो, शरीर निर्बल हो, जिनके पैर दुखते हों और जिन्हें जूते पहननेकी आदत हो उन्हें चाहिए कि वे विना जूता पहने चलनेके प्रयोगको आजमा करके देखें। उन्हें तुरंत ही जान पड़ेगा कि वे पैरोंसे जमीन पर चलने और उनमें पसीना न आने देनेसे कितना लाभ उठा सकते है। सैंडल बहुत अच्छी जातिकी जूतियाँ है और औरोंकी अपेक्षा सस्ती भी हैं। अफ्रिकामें पाइनटाउनके पास ट्रापिस्ट लोग ऐसी जूतियाँ बनाते है। फिनिक्समें भी सैंडल बन सकते हैं। परंतु एक बात यह है कि साधारण वर्गके मनुष्य इतनी हिम्मत नहीं कर सकते कि वे अकेले सैंडलसे निर्वाह कर सकें। ऐसे मनुष्योंको चाहिए कि जब वे पैरोंको खुला रख सकें तब तो रक्खें ही और जो बूटके विना उनका काम चल सके और कुछ पगतलीके लिए आवश्यकता जान पड़े तो उन्हें सैंडलका उपयोग करना चाहिए।

८ स्त्री-पुरुषका सम्बन्ध ।

जिन्होंने आरोग्यके प्रकरण ध्यान-पूर्वक पढे हैं उनसे मेरी प्रार्थना है कि वे इस प्रकरणको विशेष ध्यानके साथ पढ़ें और इस पर खूब विचार करें। क्योंकि और-और प्रकरण तो पुस्तकमें आगे भी आवेंगे और मैं मानता हूँ कि वे उपयोगी होंगे, परन्तु इस विषय पर ऐसा आवश्यक दूसरा एक भी प्रकरण न आयगा। मैं पहले ही सूचित कर गया हूँ कि इन प्रकरणोंमें मैंने एक भी ऐसी बात नहीं लिखी है कि जिसके सम्बन्धमें मुझे स्वयं अनुभव न हुआ हो या मैं दृढता-पूर्वक उसे न मानता होऊँ।

आरोग्यकी बहुतसी कुंजियाँ हैं और उनकी आवश्यकता है; परन्तु उन सबमें मुख्य कुंजी ब्रह्मचर्य है। अच्छी हवा, अच्छी खूराक और अच्छे पानी आदिके द्वारा हम थोड़ा बहुत आरोग्य सम्पादन करते हैं। परन्तु जिस भाँति हम जितना पैसा कमावें उतना ही यदि खर्च कर दें तो हमारे पास कुछ बच नहीं सकता, उसी भाँति जितना आरोग्य सम्पादन करें उतना ही यदि नष्ट कर दे तो फिर क्या बच रह सकता है। अत एव आरोग्य-धनकी रक्षा करनेके लिए क्या स्त्री और क्या पुरुष दोनों हीको ब्रह्मचर्यकी पूर्ण आवश्यकता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि जिसने अपने वीर्यकी रक्षा की है वहीं वीर्यवान्—बलवान्—है।

सवाल होता है कि ब्रह्मचर्य क्या है? इसका उत्तर यह है कि पुरुष और स्त्रीके परस्परमें न भोगनेको ब्रह्मचर्य कहते हैं। 'न भोगने' का अर्थ यह है कि एक दूसरेको विषयकी इच्छासे स्पर्श न करे, इतना ही नहीं, इस विषयका विचार भी न करे, और मेरे विचारसे तो ऐसा स्वप्न भी न देखे। पुरुष स्त्रीको देख कर और स्त्री पुरुषको देख कर पागल न हो जाय। जो गुप्त शक्ति कुदरतने हमें प्रदान की है उसे दबा कर, शरीरमें संग्रह कर उसका उपयोग अपने आरोग्यके बढ़ानेमें करना चाहिए,

और वह आरोग्य केवल शरीरका ही नहीं, मनका, बुद्धिका और स्मरण-शक्तिका भी होना चाहिए।

अब जरा उस कौतुकको भी देखिए जो हमारे आस-पास बन रहा है। छोटे बड़े सब स्त्री-पुरुष बहुत करके मोहमें पड़े हुए हैं। कई मौकों पर हम पागलसे बन जाते हैं। हमारी बुद्धि ठिकाने नहीं रहती। हमारी आँखों पर परदे गिर जाते हैं। हम कामान्ध हो जाते हैं। कामान्ध हुए स्त्री-पुरुष और बाल-बच्चोंको मैंने बिलकुल पागलके जैसे देखे हैं। मेरा निजी अनुभव भी इसी प्रकारका है। जब जब मैं ऐसी दशामें आया हूँ तब तब अपना भान भूल गया हूँ। यह बात ही ऐसी है। इस तरह एक रत्तीभर रति (सुख) के लिए हम एक मनसे भी विशेष अपना बल एक पलभरमें खो बैठते हैं। जब हमारा मद उतर जाता है तब हम निःसत्व हो जाते हैं। दूसरे दिन प्रातःकाल हमारा शरीर भारी रहता है। हमें चैन नहीं पड़ता। हमारा शरीर शिथिल हो जाता है। मन ठिकाने नहीं रहता। इस स्थितिको सुधारनेके लिए हम दूधके काढ़े पीते हैं, गजवेलकी फॉकियाँ लेते हैं, आकूतियाँ खाते हैं वैद्योंसे पुष्टि-कारी दवा माँगते हैं और खोजते ही रहते हैं कि कौनसी खूराकसे का-मोद्दीपन होगा। इसी तरह समय व्यतीत होता रहता है। और जैसे जैसे वर्ष बीतते जाते हैं वैसे वैसे हमारे शरीर और बुद्धि क्षीण होते जाते हैं और बुढ़ापेमें हमारी बुद्धि रफू-चक्कर हो जाती है।

वास्तवमें ऐसा न होना चाहिए। बुढ़ापेमें बुद्धि मंद होनेकी जगह तेज होनी चाहिए। हमारी स्थिति ऐसी होनी चाहिए कि इस देहसे सम्पादन किया अनुभव हमें और दूसरोंको उपयोगी हो जाय। और जो ब्रह्मचर्यका पालन करता है उसकी ऐसी ही स्थिति रहती है। उसे मृत्युसे डर नहीं होता, वह ईश्वरको नहीं भूलता। वह हाय-तोबा नहीं करता। वह मुसकराता हुआ इस देहको छोड़ कर अपने मालिकके पास हिसाब

देनेको जाता है। जो इस भाँति मरता है वही पुरुष है और वही स्त्री है। और कहना चाहिए कि उन्होंने ही आरोग्य-रक्षा की है।

हम साधारणतः इस बातका विचार नहीं करते कि इस जगत्में मौज-शौक, आडंबर, ईर्षा, द्वेष, क्रोध, अधीरता, अभिमान आदि ब्रह्मचर्यके भंग करनेसे होते है। अगर हम अपने मनको वशमें न रख सकें और बच्चोंसे भी बढ़ जायँ तो फिर हम जान-अजानमें कौनसा अपराध न कर डालेंगे—किस घोर कर्मको करते हुए रुकेंगे?

परन्तु ऐसा ब्रह्मचर्य पालनेवाले है कौन? और यदि सब इस प्रकारके ब्रह्मचर्यका पालन करने लग जायँ तो दुनियाका नाश ही हो जाय। इस प्रसंगको छेड़नेसे धार्मिक चर्चाका आ जाना सम्भव है, अत एव उसे छोड कर केवल सासारिक दृष्टिसे ही हम इस पर विचार करेंगे। मेरे विचारमें इन दोनों कल्पनाओंका मूल हमारी कायरता और भय है। हम ब्रह्मचर्य पालना नहीं चाहते, अत एव छुटकारा पानेके बहाने ढूँढ़ते हैं। संसारमें ब्रह्मचर्य पालनेवालोंकी कमी नहीं है, परन्तु वे खोजनेसे सहज ही मिल जाते हों तो उनकी कीमत भी क्या हो? हीरेके लिए बहुतसे मजदूरोंको पृथ्वीकी खानोंके भीतर रहना पड़ता है। और इतने पर भी पहाड़के जितने कंकरोंमेंसे एक मुट्ठीभर हीरे हाथ आते हैं। ऐसी दशामें ब्रह्मचर्य पालनेवाले हीरोंको खोजनेके लिए कितने प्रयत्न करनेकी आवश्यकता है, इस प्रश्नका उत्तर सबको हिसाब करके अपने आप निकालना चाहिए। ब्रह्मचर्यका पालन करते हुए यदि पृथ्वीका नाश हो जाय तो उसके साथ हमारा सम्बन्ध ही क्या है? हम तो ईश्वर नहीं हैं। जिसने पृथ्वीको बनाया है, वह अपने आप उसे सँभालेगा। हमें यह प्रश्न ही न करना चाहिए कि दूसरे ब्रह्मचर्य पालते हैं या नहीं। व्यापार, वकालत आदि करते समय कौन यह विचार करने [illegible] है कि सब लोग यदि इन धंधोंमें लग जायँगे तो क्या होगा?

कहनेका अभिप्राय यह है कि इन प्रश्नोंका उत्तर ब्रह्मचर्य पालन करने-वालेको समय पर अपने आप ही मिल जायगा । वे दिन-दोपहरको देख सकेंगे कि सब लोग ब्रह्मचर्य पालन करने लगे तो क्या होगा ।

सवाल यह है कि सांसारिक झंझटोंमें फँसे हुए मनुष्य इस विचारको कैसे अमलमें ला सकते हैं? विवाहितोंको क्या करना चाहिए? बाल-बच्चे-वाले क्या करें? जो कामको वशमें न कर सकते हों उन्हें क्या करना चाहिए? इस विषयमें जो सबसे उत्तम उपाय है वह हम बतला चुके हैं। उसी आदर्शको सामने रखनेसे उसी रूपमें या उससे कुछ कम रूपमें उसका अनुकरण किया जा सकता है। बच्चोंको जब सिखाते हैं तब हम उनके सामने सुन्दरसे सुन्दर अक्षरोंका नमूना रखते हैं। वह उनकी —अपनी शक्तिके अनुसार—अच्छी या बुरी नकल करते हैं। यही बात ब्रह्मचर्यके विषयमें समझिए। अखंड ब्रह्मचर्यका आदर्श अपने सामने रख कर हमें उसकी नकल करनी चाहिए। ब्याह हो गया तो क्या हुआ? प्राकृतिक नियम तो यह है कि स्त्री-पुरुषको जब प्रजा उत्पन्न करनेकी इच्छा हो तभी वे ब्रह्मचर्यका भंग करें। इस नियमका विचार कर जो दम्पती दो-चार वर्षमें ब्रह्मचर्यका भंग करेंगे वे बिलकुल पागल न बन जायँगे। उनके पास वीर्य-धन भी ठीक परिमाणमें इकट्ठा रहेगा। पर भाग्यसे ही ऐसे दम्पती हमारे देखनेमें आवेंगे कि जो सन्तानके लिए ही कामभोग करते हों। बाकी हजारों मनुष्य तो कामभोगकी लालसामें ही लगे रहते हैं और काम-सेवन करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि उनकी इच्छाके विरुद्ध सन्तान होती है। इस विषय-सेवनमें हम ऐसे अन्धे हो जाते हैं कि अपने सामनेवालेका विचार ही नहीं करते। इस बातमें स्त्रीकी अपेक्षा पुरुषका अपराध भारी है। वह अपने पागलपनमें नहीं सोचता कि स्त्री निर्बल है और सन्तानका पालन-पोषण करनेकी उसमें शक्ति नहीं है। पश्चिमके लोग तो इस विषयमें मर्यादाका

भी उल्लंघन कर गये है । वे भोग भोगते और सन्तानके भारसे दूर रह-नेके लिए अनेक उपचार करते है । वहाँ इस विषय पर ग्रन्थ लिखे गये है । ऐसे उपाय वतलानेवालोंकी वहाँ दूकानें खुल गई हैं कि भोग भोगते रहने पर भी सन्तान न होने पावे । अभी हम ऐसे पापसे मुक्त हैं, परन्तु हम अपनी स्त्रियों पर वोझा लादते हुए जरा भी विचार नहीं करते । हम इस वातकी भी परवा नहीं करते कि हमारी सन्तान, निर्वल, वीर्यहीन, पागल और निर्बुद्धि होती है । जब जव सन्तान होती है तब तव हम ईश्वरका उपकार मानते हैं, परन्तु यह अपनी मूर्खताके छिपानेका एक मार्ग है । निर्वल, लूली-लँगडी, विषयी, और निःसत्त्व सन्तानके होनेमें हमें ईश्वरका कोप ही क्यों न मानना चाहिए ? कम उमरमें सन्ततिके होनेमें हमें कौनसी सुख माननेकी वात है ? उस समय हमें क्या उत्सव मनाना चाहिए ? इसे प्रकृतिका महाकोप क्यों न गिना जाय जो वारह वारह वर्षकी छोकरियाँ माता हो जावें ! हम इस वातको जानते है कि तुरंतके वोये हुए वृक्ष पर फल आ जायँ तो वह वृक्ष निर्वल होता है । इससे हम ऐसे उपाय करते है कि उस पर शीघ्र फल न लगने पावें । इतना होने पर भी छोटी उमरके वाल-वच्चोंके सन्तान होती है तो हम आनन्द-वधाइयाँ गाते हैं । पर यह भयंकर भूल है । हिन्दुस्तानमें या संसारमें निःसत्त्व मनुष्योंके समुदाय चीटियोंकी भाँति अनन्त हो जायँ, इससे हिन्दुस्तान या दुनियाका क्या उद्धार हो सकता है ? ऐसी दशामें हमसे तो वे पशु ही अच्छे हैं जो उनका तभी मिलाप कराया जाता है जव कि वच्चा पैदा करना होता है । संयोग हुए वाद—गर्भसे लेकर वच्चा पैदा होकर जव तक दूध पीना न छोड दे तव तक—का समय अत्यन्त पवित्र गिनना चाहिए और इस समयमें पूर्ण ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिए । परन्तु हम क्षण भर भी इस विचारको अपने पास नहीं आने देते और अपना काम किये ही जाते है ! इस प्रकारके

असाध्य रोगसे हमारे मन रोगी हो रहे हैं और यही रोग हमें मौतसे मिलाते हैं, और जब तक मौत नहीं आती तब तक हमारा मन पागलोंकी भाँति भ्रमा करता है। विवाहित स्त्री-पुरुषोंका मुख्य कर्तव्य है कि वे विवाहका खोटा अर्थ न कर ठीक अर्थ करें और जब सन्तति न हो तब वारिसकी इच्छासे ही संयोग करें।

हमारी इस घृणा-योग्य स्थितिमें ऐसा करना बहुत ही कठिन है। हमारी खूराक, हमारा रहन-सहन, हमारी बात-चीत, हमारे आस पासके दृश्य ये सब हमारी विषय-वासनाको जागृत करनेवाले हैं और हमें अफीमकी तरह विषयका नशा चढ रहा है। कुछ लोग कह सकते हैं कि हमारी जब ऐसी स्थिति है तब हम विचार करके भी उससे पीछे कैसे हट सकते है। जो लोग ऐसी शंका करते हैं उनके लिए ये प्रकरण नहीं लिखे गये। ये प्रकरण तो उनके लिए है जो क्या करना चाहिए, इसका विचार कर प्रयत्न करनेको तैयार है। जो अपनी स्थितिमें सन्तोष मानते हैं उन्हें इन विचारोंके पढनेमें झुँझलाहट जान पडेगी, परन्तु जो अपनी हीन दशाको समझ कर उससे उकता गये हैं उन्हें सहारा देना इस लेखका हेतु है।

ऊपर लिखी हुई बातोंसे हम समझ सकते हैं कि जिनका विवाह नहीं हुआ हो उन्हें ऐसे कठिन समयमें व्याहका विचार ही न करना चाहिए, और यदि व्याहके विना काम ही न चले सके तो उन्हें देरसे विवाह करना चाहिए। जवान पुरुषोंको पचीस-तीस वर्षकी अवस्था तक विवाह न करनेकी प्रतिज्ञा करनी चाहिए। ऐसा करनेसे आरोग्यके सिवाय और भी जो अन्यान्य लाभ होंगे उनका यहाँ पर हम वर्णन नहीं कर सकते। उन लाभोंको सब कोई अपने आप प्राप्त कर सकते है।

जो माता-पिता इन लेखोंको पढें उनके प्रति मैं इतना कहना योग्य समझता हूँ कि वे अपने बच्चोंका बचपनमें ही व्याह कर अपने

अन्ध स्वार्थके लिए उनके गले पर छुरी न फेरें। उन्हें उनके स्वार्थ प
भी ध्यान देना चाहिए । जाति-विरादरीमें बडे कहलाने और मूर्खों
नाम पानेके लिए उनकी हत्या करना उचित नही है । उन्हें अप
बच्चोंके शरीरकी रक्षा करनी चाहिए, उन्हें शिक्षा देनी चाहिए, औ
अभ्यास करा कर योग्य बनाना चाहिए, न कि उनका बचपनमें ब्या
कर उन पर घर-संसारका बोझा डालना चाहिए । इस प्रकारके का
करनेमें बच्चोंका बडा भारी अहित होता है ।

अखीरमें जो स्त्री या पुरुप अपने साथीके मर जानेके कारण वैधव्य या विधुरपनेको प्राप्त हो गये हैं उन्हें सर्वथा ब्रह्मचर्य पालना चाहिए। यही आरोग्य-रक्षाका नियम है । कितने ही डाक्टरोंका मत है कि जवान स्त्री-पुरुषको वीर्यपात करनेका मौका अवश्य मिलना चाहिए और दूसरे डाक्टरोंका कहना हे कि किसी भी तरह वीर्यपात करनेकी आवश्यकता नही है । इस प्रकार डाक्टरोंमें भी परस्पर मतभेद है । हमें यह समझ कर कि कुछ डाक्टर लोग विपय-सेवनको अच्छा भी समझते है, विपय-सेवनकी ओर न झुक जाना चाहिए। मै अपने निजके और दूसरोंके अनुभवसे निश्चय-पूर्वक कह सकता हूँ कि आरोग्य-रक्षाके लिए विषय-सेवनकी कुछ आवश्यकता नहीं है । इतना ही नहीं, विपय-सेवन करनेसे—वीर्यपात होनेसे—उलटा स्वास्थ्यको नुकसान पहुॅचता है । बहुत समयसे बॅधी हुई तन-मनकी दृढताको एक बारके वीर्यपातसे भी ऐसी हानि पहुॅचती है कि उसे पूरी करनेके लिए बहुत समय चाहिए और इसके बाद भी असली स्थिति तो आ ही नहीं सकती । फूटे हुए प्यालेको जोड़ कर काम लिया जा सकता है, परन्तु वह रहेगा फूटा ही ।

वीर्य-रक्षाके लिए स्वच्छ हवा, स्वच्छ पानी, स्वच्छ खूराक और स्वच्छ विचारोंकी पूरी आवश्यकता हे । इस भॉति नीति और आरोग्यका बहुत ही निकट सम्बन्ध है । पूर्ण नीतिमान् मनुष्य ही पूर्ण आरोग्य सम्पादन कर

सकता है। बीती हुई बातोंको भूल कर जो इस विषय पर विचार करेंगे और इसे उपयोगमें लावेंगे उन्हें प्रत्यक्ष अनुभव हो जायगा। थोड़े समय तक भी जिन्होंने ब्रह्मचर्यका पालन किया है वे देखेंगे कि उनके शारीरिक और मानसिक बलमें कितनी उन्नति हुई है। एक बार यह पारस-मणि हाथमें आ गया कि लोग इसकी जी-जानके साथ सँभाल रक्खेंगे। यदि जरा भी वे चूकेंगे तो तुरंत कहेंगे कि हमने बड़ी भूल कर डाली। मैंने तो ब्रह्मचर्यके अगणित लाभ समझे बाद भी भूलें की है और उनके कड़ने फल भी भोगे हैं। दुःख है कि कहाँ तो भूल किये पहलेकी वह भव्य दशा और कहाँ भूलके बादकी मेरी एक भिखारीके जैसी स्थिति! मेरे सामने अपनी इस दशाका चित्रसा खिंच जाया करता है। परन्तु मैं अपनी भूलोंसे इस मणिकी कदर करना सीखा हूँ। अब भी नहीं जानता कि अखंड रीतिसे इसका पालन कर सकूँगा या नहीं, परन्तु मुझे आशा है कि परमात्माकी सहायतासे मै इसे पाल सकूँगा। ब्रह्मचर्यसे मेरे शरीर और मनको जो लाभ हुए है उन्हें मै प्रत्यक्ष देख रहा हूँ। मैं बालकपन-में ही ब्याह दिया गया था और बालकपनमें ही कामान्ध होकर मै बाल-बच्चोंका पिता भी बन गया था। मैंने बहुत वर्षोंके बाद जाग कर देखा तो मुझे जान पड़ा कि मैं घोर अँधेरेमें पड़ा हुआ हूँ। मेरी भूलसे—मेरे अनुभवसे—कोई भी सचेत होकर बचेगा तो मै समझूँगा कि इस प्रकरणको लिख कर मैं कृतार्थ हुआ। लोग समझते हैं कि मुझमें बहुत ही उत्साह है और मैं भी इस बातको मानता हूँ। मेरा मन निर्बल नहीं माना जाता और इसी कारण कितने ही तो मुझे हठी कहते हैं। मेरे तन और मनमें रोग है, परन्तु सहवासमें जिन लोगोंको मैंने देखा है उनकी अपेक्षा मेरी तन्दुरुस्ती अच्छी है। लगभग बीस वर्ष तक विषयोंमें फँसे रह कर जागनेके बाद मै जिस दशाको प्राप्त कर सका हूँ, यदि इन बीस वर्षोंको भी मैं बचा सकता तो कितना अच्छा होता। इस विषयमें मेरा

स्वतःका विश्वास है कि उस दशामें आज मेरे उत्साहका पार ही न रहता और लोक-सेवा या अपने स्वार्थमें मै जितना उत्साह बतला सकता उसकी बराबरी करनेवालेकी मेरे उत्साहके सामने परख हो जाती। मेरे साधारण उदाहरणसे बस इतना ही सार खींचा जा सकता है। और जिनने अखंड ब्रह्मचर्यका पालन किया हे उनके शारीरिक, मानसिक और नैतिक बलका तो वे ही लोग अन्दाज कर सकते हैं जिन्होंने उन्हें देखा है। उसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

इस प्रकरणके पढ़नेवालोंने समझ लिया होगा कि जब विवाहित स्त्री-पुरुषोंको भी ब्रह्मचर्य पालनेकी शिक्षा दी गई है और रँडुवोंको या विधवाओंको भी ब्रह्मचर्य पालन करना बतलाया गया है तब विवाहित या अविवाहित स्त्री-पुरुषोंके लिए अन्यत्र विषय सेवनकी तो बात ही नहीं कही जा सकती। पर-स्त्री या वेश्या पर कुदृष्टि डालनेसे क्या परिणाम होता है, इसका विचार आरोग्यके प्रकरणमें नहीं किया जा सकता। यह धर्म और गंभीर नीतिका विषय है। यहाँ तो इतना ही कह सकते है कि पर-स्त्री और वेश्या-गमन करनेवाले हजारों पुरुष गरमी आदि नाम न लेने योग्य नीच रोगोंसे सड़ते हुए देखनेमें आते हैं। प्रकृतिकी कृपासे ऐसे स्त्री-पुरुषोंका शरीर फूट निकलता है और वे चारपाई पर पड़े रहते है। अपनी बीमारियोंको दूर करनेके लिए उन्हें डाक्टरोंके यहाँ चक्कर लगाने पड़ते है। पर तब भी वे लाभ नहीं उठा पाते। जहाँ परस्त्री-गमन नहीं है वहाँ पर १०० वैद्य-डाक्टर निकम्मे रहते है। इन बीमारियोंने मनुष्य-जातिको ऐसा घेर रक्खा है कि विचारशील डाक्टर कहने लगे हैं कि दवा होने पर भी जब तक पर-स्त्री-गमनका सोत जारी है तब तक प्रजाका शीघ्र नाश होनेके सिवाय कोई वश नहीं है। इन बीमारियोंकी दवा ऐसी जहरीली होती है कि जिसका कोई ठिकाना नहीं। यद्यपि इन दवाओंसे ऐसे रोगोंमें लाभ पहुँचता देखा जाता है, परन्तु इसके साथ ही

दूसरे अनेक रोग शरीरमें घर कर बैठते है और फिर वे वंश-परपरामें उतरते है।

अब अन्तमें विवाहित मनुष्योंको ब्रह्मचर्यका उपाय बतला कर यह प्रकरण पूरा किया जाता है। विवाहित मनुष्य केवल हवा, पानी और खूराकके नियमोंका पालन करके ही ब्रह्मचर्यकी रक्षा नहीं कर सकता। उसे अपनी स्त्रीके साथ एकान्त-वास भी छोड़ना चाहिए। विचार करनेसे जान पडेगा कि विषय भोगनेके सिवाय स्त्रीके साथ एकान्त-वासकी कोई जरूरत नहीं है। रातमें स्त्री-पुरुषोंको अलग कमरेमें सोना चाहिए, दिनमें निरंतर अच्छे कामोंमें लगे रहना चाहिए, अपने सुविचारोंको उत्तेजित करनेवाली पुस्तकें पढ़नी चाहिए, श्रेष्ठ पुरुषोंके जीवन-चरित्रों पर विचार करना चाहिए और निरन्तर यही चिन्तन करते रहना चाहिए कि भोग तो सदा ही रोगके घर है। जब जब विषयकी इच्छा हो तब तब उन्हें ठंढे पानीसे नहा लेना चाहिए। ऐसा करनेसे शरीरमें जो महा अग्नि है उसका सुन्दर रूपान्तर होकर वह स्त्री और पुरुष दोनोंकी उपकारक होगी और सच्चे सुखको बढ़ावेगी। ऐसा करना कठिन है, परन्तु कठिनाइयों पर विजयका नक्कारा बजानेके लिए तो हम पैदा ही हुए है। जिसे आरोग्यके सुन्दर-स्वर्गीय सुख भोगनेकी हृदयसे कामना हो उसे कठिनाइयों पर विजय सम्पादन करना ही पड़ेगा।

आरोग्य-दिग्दर्शन।

दूसरा भाग।

१ हवा।

इस बातका विचार किया जा चुका कि आरोग्य कैसे सुरक्षित रक्खा जा सकता है, उसका आधार किस पर है और उसे प्राप्त करनेके लिए क्या उपाय करना आवश्यक है। यदि सब मनुष्य आरोग्य-रक्षाके सारे नियमोंका सदा पालन करने लगें और आरोग्य बनाये रखनेके लिए अखंड ब्रह्मचर्यका पालन करने लगें तो अब जो प्रकरण लिखे जाते हैं उनकी आवश्यकता ही न हो। क्योंकि ऐसे मनुष्योंको शारीरिक या मानसिक रोगोंका होना ही सम्भव नहीं है। परन्तु ऐसे मनुष्य शायद ही मिल सकें—ऐसे भाग्यवान् विरले ही है—जिन्हें कभी कोई बीमारी न हुई हो। साधारण मनुष्य तो सदा बीमार ही रहते है। ऐसे मनुष्य पहले भागमें बतलाये हुए नियमोंको जितना पालन करेंगे उतना ही वे आरोग्य लाभ कर सकेंगे। ऐसे मनुष्योंको यदि कभी कोई बीमारी हो जाय और उन्हें उसके उपचारोंका थोडा बहुत अनुभव हो तो वे घबरा कर वैद्य या हकीमोंके यहाँ दौड़ते न फिरें, इसी हेतुसे ये दूसरे भागके प्रकरण लिखे जाते हैं।

ऊपर हम लिख चुके हैं कि आरोग्यके लिए हवा सबसे पहली आवश्यक वस्तु है। इसी तरह हवाको रोग नष्ट करनेके लिए भी एक बहु-

मूल्य वस्तु समझनी चाहिए। किसी मनुष्यके जोड रह गये हों तो उसे गरम हवाकी भाप देनेसे पसीना छूटेगा और उसके जोड ढीलें पढ़ जायँगे। इस तरहकी जो भाफ दी जाती है उसे 'टरकिश-बाथ' (स्नान) कहते है।

जिस मनुष्यका शरीर बुखारसे आगके सदृश जल रहा हो उसे बिलकुल नंगा कर खुली हवामें सुलाना चाहिए। ऐसा करनेसे उसकी गरमीका माप एकदम उत्तर कर उसकी बे-चैनी मिट जायगी और उसका शरीर ठंडा हो जायगा। जब शरीर ठंडा हो जाय तब उसे ओढ़ा देना चाहिए। उससे पसीना आकर उसका बुखार उतर जायगा। हम लोगोंका ऐसा विश्वास है कि बीमार चाहे गरमीसे घबरा रहा हो तब भी सब खिडकी-दरवाजे बन्द कर उसे खूब ओढा देना चाहिए। परन्तु यह विश्वास सर्वथा वहम है। इससे बीमार घबरा कर निर्बल हो जाता है। इस प्रकार ओढानेसे कितनी ही बार पसीना आने पर भी थर्मामेटरका पारा चढ़ा हुआ नहीं देख पडता और बीमार कमजोर अवश्य हो जाता है। गरमीके बुखारमें ऊपर बताया हुआ हवाका प्रयोग करनेमें किसी मनुष्यको नहीं डरना चाहिए। उसे इस प्रयोगका लाभ तुरंत जान पढ़ेगा। इससे हानि तो होती ही नहीं, केवल इस बातकी सँभाल रखनी चाहिए कि बीमार नगा रखनेके कारण स्वयं घूजने न लगे। बीमारको ठंड मालूम हो तो समझना चाहिए कि उसे सख्त घबराहट नहीं है। अगर बीमार नग्न-दशामें बाहर न रह सकता हो तो उसे बाहर खुली हवामें ओढा कर सुलानेमें कभी नुकसान नहीं होगा।

बहुत दिनोंके बुखार या दर्दके लिए हवा परिवर्तन करना बहुत ही उत्तम इलाज है। हवा बदलनेका रिवाज हवाके उपचारका ही अंग है। हम अपने रहनेके मकानोंको कई बार बदलते ही हैं। कई लोग ऐसा मानते हैं कि जिस घरसे बीमारी नहीं जाती उसमें भूत-प्रेत निवास

करते हैं, परन्तु यह निरा वहम ही मालूम होता है । हॉ, यह कहा जा सकता है कि वह हवाकी खराबी ही भूत-प्रेत है, अत एव घरके बदलनेसे हवा भी बदल जाती है । यही बड़ा भारी फायदा होता है । हवाका हमारे शरीरके साथ ऐसा गाढ सम्बन्ध है कि उसमें कुछ भी फेर-फार होता है तो उसका अच्छा या बुरा फल हमें मिले बिना नहीं रह सकता। हवा परिवर्तनके लिए पैसेवाले आदमी दूर देशमें जा सकते हैं और गरीब मनुष्य अपने एक गॉवसे दूसरे गॉवमें या एक घरसे दूसरे घरमें जाकर ही लाभ उठा सकते हैं । एक कोठेसे दूसरे कोठेमें ले जानेसे भी बीमारको लाभ पहुँच सकता है । इस परिवर्तनके समय इस बातका विचार कर लेना आवश्यक है कि जहॉ वे जावें वहॉकी हवा विशेष अच्छी होनी चाहिए । नमीकी हवामें पैदा हुई बीमारी विशेष नमीवाली हवाके स्थानों पर जानेसे दूर न होगी । कितनी ही बार हवा बदलनेसे लाभ नहीं होता । इसका कारण यही है कि समझ कर हवा बदली नहीं जाती। और कितनी ही बार ऐसा होता है कि हवा बदलनेके लिए और-और जो सावधानियॉ रखनी चाहिए वे नहीं रक्खी जातीं ।

इस प्रकरणके पढनेवालोंसे मेरी खास सूचना है कि वे पहले भागमें लिखे हुए हवाके प्रकरणके साथ इस प्रकरणकी तुलना करें । उस प्रकरणमें हवाके सम्बन्धमें सामान्य विचार किया गया है और बतलाया गया है कि हवाका आरोग्यके साथ क्या सम्बन्ध है । और इस प्रकरणमें हवाका इलाजके तौर पर विचार किया गया है । उस प्रकरणको इस प्रकरणके साथ पढ जानेसे यह प्रकरण विशेष अच्छी तरह समझमें आ जायगा ।

---

२ जल-चिकित्सा ।

हवा अपना काम अदृश्य रीतिसे करती रहती है, इस कारण हम हवाके उपचारोंकी खूबीको अच्छी तरह नहीं देख सकते । परन्तु पानीके कार्य और असरको हम देख सकते हैं, इस लिए उसकी खूबियाँ तुरंत हमारी समझमे आ सकती है ।

भाफके जरियेसे होनेवाले पानीके उपचारको थोडा बहुत सब लोग जानते है । बुखारमें हम बीमारकी भाफसे चिकित्सा करते हैं । बहुत बार मस्तकके भारी दर्दको भाफसे मिटा देते है । सन्धि-वातसे सन्धियाँ जुड़ गई हों तो भाफ देकर ठंडे पानीमें स्नान करानेसे शीघ्र ही लाभ पहुँचता है। शरीरमें फोड़े-फुन्सी हो गये हों तो केवल मलहम-पट्टीसे काम नहीं चल सकता—भाफ देनेसे वे शीघ्र ही मुरझा जायँगे । बहुत थका हुआ आदमी अगर भाफ ले या गरम पानीसे स्नान कर तुरत ठंडे पानीसे स्नान करे तो उसका शरीर बिलकुल हलका हो जायगा और उसकी थकावट उतर जायगी । जिसे नींद न आती हो वह भाफ लेकर, ठंडे पानीसे स्नान कर खुली हवामें सो जाय तो बहुत करके उसे शीघ्र नींद आ जायगी ।

जहाँ भाफका उपयोग किया जाता है वहाँ पर गरम पानीका उपयोग भी हो सकता है । अत एव गरम जल और भाफमें भेद न समझना चाहिए । पेटमें सख्त दर्द होता हो तो एक बोतलमें खौलता हुआ गरम जल भर कर और पेट पर एक मोटा कपड़ा रख कर उसका सेक करनेसे तुरंत शान्ति मिलेगी । ऐसी दशामें कितनी ही बार उलटी करनेकी जरूरत होती है । खूब गरम पानी पीनेसे उलटी हो सकती है । जिसे कब्ज रहती हो उसे सोते समय या सुबह उठ कर दतौन किये बाद गरम पानी पीनेसे साफ दस्त होना सम्भव है । सर गार्डन फ्रिंग एक कॅपके प्रधान थे । उनकी तन्दुरुस्ती अच्छी रहती थी । उनसे

किसीने पूछा कि आपकी तन्दुरुस्ती अच्छी होनेके कारण क्या हैं? इसका जवाब उन्होंने यह दिया कि मैं सोते समय और प्रातःकाल उठते समय एक एक गिलास गरम पानी सदा पिया करता हूँ। उससे मेरी तन्दुरुस्ती अच्छी रहती है। कितने ही मनुष्योंको चाय पीनेके बाद दस्त उतरता है। पर वे बेवकूफीसे समझते है कि चायसे दस्त होता है। और वास्तवमें देखा जाय तो चाय नुकसान ही करती है। दस्त साफ होनेका कारण तो उसमेंका जल है।

भाफ लेनेके लिए एक खास तरहके चौखटे आते है, परन्तु साधारणतया उनके मोल लेनेकी आवश्यकता नहीं है। निवार या बेंतकी बैठककी कुर्सीके नीचे स्पिरीट या मिट्टीके तैलका चूल्हा रखना चाहिए अथवा जली हुई लकड़ी या कोलेकी अँगीठी रखनी चाहिए। उस पर एक छोटी भगोनीमें जल भर कर उसे ढक देनी चाहिए। कुर्सी पर एक चद्दर या कम्बल रख कर उसे आगेकी ओर इस तरह लटका देना चाहिए कि बीमारको अँगीठी या भाफकी आँच न लगे। फिर बीमारको कुर्सीपर बिठा कर उसके चारों ओर चद्दर या कंबल लपेट देना चाहिए। इसके बाद भगोनी परसे ढक्कनको हटा देना चाहिए। ऐसा करनेसे बीमारको भाफ लगना शुरू होगा। हम लोगोंमें ऐसी रीति है कि बीमारका मस्तक ढक देते हैं, परन्तु इसकी कोई जरूरत नहीं है। शरीरमें जो गरमी आती है वह मस्तक तक चढती है और मुँह पर पसीना आ जाता है। यदि बीमारमें उठने-बैठनेकी ताकत न हो तो निवारके कोन्द पर या लोहेके पलँग पर उसे सुला कर भाफ दी जा सकती है। उस समय इतनी सावधानी रखनी चाहिए कि गरमी और भाफ बाहर न निकलने पावे और बीमारको आँच न लगे तथा कम्बल वगैरह जल न उठें। यदि बीमार निर्बल प्रकृतिका हो तो भाफ देनेमें बहुत आगा-पीछा सोचनेकी जरूरत है, क्योंकि भाफ देनेमें जैसे लाभ हैं वैसे ही हानि

भी है। भाफ लिये वाद मनुष्य सदा निर्बल हो जाता है । यह निर्बलता बहुत दिनों तक नहीं रहती, परन्तु सदा भाफ लेनेकी आदत हो जानेसे मनुष्य निःसत्त्व हो जाता है। इससे भाफका प्रयोग बड़ी सावधानीके साथ करना चाहिए। भाफ शरीरके जुदे जुदे भागको भी दी जा सकती है। यदि मस्तक दुखता हो तो सारे शरीरको भाफ देनेकी कोई जरूरत नहीं है। एक छोटे मुँहकी मटकीमें जल उकाल कर उस पर मस्तक रखना चाहिए और फिर मस्तकको कपड़ेसे ढक कर नाकसे भाफ लेनी चाहिए। नाक बन्द हो रहा हो तो वह इस तरह भाफ लेनेसे खुल जायगा। जिस हिस्सेमें सूजन चढ़ रही हो उसे दूर करनेके लिए उतने ही हिस्सेको भाफ देनी चाहिए।

साधारण तौर पर गरम पानी और भाफके फायदोंको तो लोग कुछ कुछ समझते है; परन्तु ठंडे पानीके फायदोंको समझनेवाले बहुत ही कम देखनेमें आते हैं। इनके समझनेवाले भले ही कम मनुष्य क्यों न हों, परन्तु यह कहा जा सकता है कि ठंडे पानीमें जो असर है वह गरम पानीमें नहीं है। कई अंशोंमें ठंडे पानीमें शक्ति देनेका गुण है । निर्बल मनुष्य पर हम ठंडे पानीके उपचार कर सकते हैं। लू, शीतला आदि चर्म-व्याधियोंके लिए ठंडे पानीसे भिगोई हुई चद्दर लपेटनेका इलाज बहुत लाभकारी है। इसका आश्चर्यकारक असर होता है। यदि चक्कर आते हों या सन्निपात हो गया हो तो ऐसे समय बरफके पानीमें भिगोया हुआ कपड़ा सिर पर रखनेसे बीमारको शान्ति मिल सकती है। जिसे दस्त न होता हो उसके पेट पर बरफके पानीमें भिगोया हुआ पट्टा रखनेसे दस्त होना सम्भव है। जिसे वीर्यपात हो जाता हो उसे पेडुओं पर ठंडे पानीके पट्टे बाँध कर सोना चाहिए, इससे बहुत लाभ होना सम्भव है। शरीरमें कहींसे भी खून गिरता हो वहाँ पर बरफके पानीकी पट्टी बाँधनेसे खून गिरना बन्द हो जाता है। नाकसे खून गिरने पर सिर पर खूब ठंडा पानी

डालनेसे लाभ होगा । जिनके नाकमें व्याधि हो, जिन्हें जुकाम हो रहा हो, जिनके सिरमें दर्द हो वे एक-दो बार नाकसे पानी चढ़ावें तो उन्हें बहुत ही लाभ होगा । नाकके एक नथुनेसे पानी चढा कर दूसरे बन्द नथुनेसे निकाला जा सकता है या दोनों नथुनोंसे पानी चढ़ा कर गलेके द्वारा निकाला जा सकता है । नाक साफ हो तो नाकसे चढ़ाया हुआ पानी पेटमें चला जाय तो भी कोई डरकी बात नहीं है । नाकमें पानी चढ़ा कर उसे साफ रखनेकी आदत बहुत अच्छी है । जिसे पानी चढा-नेकी रीति न आती हो वे पिचकारी द्वारा नाकमें पानी चढ़ा सकते हैं । परन्तु दो चार बार प्रयत्न करनेसे यह रीति सहजमें आ सकती है । प्रत्येक मनुष्यको यह बात अवश्य जान रखनी चाहिए कि ऐसे सहज उपायसे बहुत बार मस्तकका दर्द बन्द हो जाता है । नाकमें दुर्गंध आती रहने पर भी यह उपाय काम देता है । कई लोगोंके नाकमें छिल-केसे जमते रहते हैं उनके लिए नाकसे पानी चढाना रामबाण दवा है ।

कितने ही मनुष्य गुदासे पानी चढ़ाते हुए घबराते है । वे कहते हैं कि इससे शरीर कमजोर हो जाता हे, परन्तु यह भ्रम है । तुरंत दस्त होनेके लिए गुदा द्वारा पिचकारी लेनेसे बढ़ कर कोई इलाज नहीं है । बहुतसी बीमारियोंमें जब दूसरे दूसरे इलाज काम नहीं देते तब यह इलाज काम देता है । इस इलाजमें मल बिलकुल साफ हो जाता है और नया जहर जमने नहीं पाता । जिसे बादी हो, बदहज्मी हो या कोठेकी खराबीसे उत्पन्न हुई अन्य कोई दूसरी बीमारी हो तो उसे दो रतल पानी चढ़ाना चाहिए । इस उपायसे उसे बहुत शीघ्र लाभ होगा । इस विषय पर एक मनुष्यने एक पुस्तक लिखी है । उसने लिखा है कि वह बहुतसे इलाज करते रहने पर भी बदहज्मीसे छुटकारा ही न पाता था, उसका शरीर शिथिल होकर पीला पड़ गया था, परन्तु पिचकारी लेना शुरू कये बाद थोड़े ही दिनोंमें उसकी भूख खुल कर प्रकृति ठीक हो गई ।

पिचकारीसे पीलियाके जैसी बीमारी तक दूर की जा सकती है। यदि पिचकारीका उपयोग अधिक बार करना पड़े तो ठंडे पानीकी ही पिचकारी लेनी चाहिए, क्योंकि गरम पानीकी पिचकारी अधिक बार लेनेसे निर्बलता होना सम्भव है। परन्तु स्मरण रहे कि यह दोष पिचकारीका नहीं है।

बहुतसे प्रयोगोंको आजमा कर डाक्टर लुईकूनेने निश्चित किया है कि हर प्रकारकी बीमारीके लिए पानीके अमुक तरहके उपचार सबसे श्रेष्ठ उपचार हैं। उसकी इस विषयकी पुस्तकोंके बहुतसी भाषाओंमें अनुवाद हो चुके हैं। हिंदुस्तानमें भी उसके अनुवाद हुए है। उसका कहना है कि सारी बीमारियोंका मूल कोठा है। कोठेमें जब बुखार होता है तब बाहरके भागमें फोड़े-फुन्सी, वादी, या दूसरी बीमारियाँ निकल पड़ती हैं। अथवा बुखार बाहर निकल कर सारे शरीरको गरम कर देता है। जल-चिकित्साके सम्बन्धमें डा० लुईकूनेसे भी पहले एक लेखककी लिखी हुई 'जल-चिकित्सा' नामकी एक बहुत पुरानी पुस्तक है। परन्तु लुईकूनेसे पहले किसीने भी बीमारियोंकी एकता पर इतना जोर नहीं दिया, और न यह बतलाया कि सारी बीमारियोंकी मूल उत्पत्ति कोठेसे है। हमें इस बातके मान लेनेकी जरूरत नहीं है कि लुईकूनेका मत सर्वांशमें सही ही है, परन्तु इतना तो निश्चित है कि उसके विचार और उपचार कई बीमारियोंके लिए ठीक लागू पडते हैं। और इस बातका हजारों मनुष्य अनुभव कर चुके हैं। डरबनके स्वर्गीय मजिस्ट्रेट मि० ट्रीनन एक बार धनुर्वात-रोगसे अपग हो गये थे। उन्होने अनेक डाक्टरोंके इलाज किये, परन्तु कुछ लाभ न हुआ। उन्हें किसीने लुईकूनेके पास जाकर उसके इलाज करनेकी सम्मति दी। उन्होंने वहाँ जाकर उसका इलाज करना शुरू किया। लूईकूनेके इलाजका उन पर खूब अच्छा असर हुआ और वे भले चंगे हो गये। इसके बाद वे बहुत वर्षों तक डरबनमें रहे। वे

हमेशा लोगोंको लुईकूनेके उपचारोंको आजमानेकी सलाह दिया करते थे। लुईकूनेके उपचार करनेकी एक संस्था नातालमें स्वीट-वाटर्स नामके स्टेशन पर है। यह जल-चिकित्साकी लोक-प्रियताका एक ही उदाहरण है, परन्तु ऐसे बहुतसे उदाहरण देखनेमें आते है।

डा० लुईकूनेने लिखा है कि कोठेमें ठडाई पहुँचानेसे उसकी गरमी कम होती है। इसी लिए उसने वतलाया है कि कोठे और उसके आसपासके भागको जिस भाँति ठंडाई पहुँच सके पहुँचानी चाहिए। उसके लिए खूव ठडे पानीसे स्नान करना चाहिए। ऐसे स्नानकी सुगमताके लिए उसने टीनके एक खास प्रकारके 'वाथ' वनाये है। परन्तु हम उस वाथके बिना भी अपना काम चला सकते है। स्त्री-पुरुषोंके कद्के माफिक ३६ इचके या छोटे-वड़े पतरेके टव आते है। वे लुईकूनेके वाथकी जगह काम दे सकते हैं। ऐसे टवको ¾ पानीसे भर कर उसमें वीमारको इस इस तरह वैठना चाहिए कि उसके पैर ओर धड़ पानीके वाहर रहें और नाभिसे जॉघों तकका हिस्सा पानीमें डूवा रहे। वीमारको पानीमें विलकुल नंगा वैठाना चाहिए। यदि उसे ठड लगती हो तो उसके पैर और धड़ कम्वलसे ढक देने चाहिए। वीमारको उस समय कमीज वगैरह भी पहनाई जा सकती है, परन्तु वह पानीके वाहर रक्खी जानी चाहिए। वाथ ऐसी कोठरीमें लिया जाना चाहिए जहाँ हवा, प्रकाश और धूप आती हो। वीमारको चाहिए कि टवमें वैठ कर पानीके भीतर पैडू पर धीरे धीरे खरदरे रूमालसे स्वयं मले या किसीसे मलवावे। इस प्रकार यह वाथ ५ से ३० मिनिट तक या ज्यादा देर तक लिया जा सकता है। इस वाथसे कई वार तुरंत असर होता है। वीमारको वादी हो गई हो तो तुरंत वायु सरने लगता है, या डकारें आने लगती हैं। यदि वुखार चढा हो तो पाँच मिनिटमें ही थर्मामेटरका पारा एक-दो डिगरी नीचे ा जायगा। इससे दस्त हो जाता है। थके हुए मनुष्यकी थकावट दूर

हो जाती है। जिसे बिलकुल नींद न आती होगी उसका दिमाग शान्त होकर उसे नींद आने लगेगी और जिसे बहुत नींद आती होगी उसकी नींद दूर होकर उसमें चैतना आ जायगी । इस बाथसे इस प्रकारके जो बाहिरमें विरुद्ध जान पड़नेवाले परिणाम निकलते है इसका कारण ऊपर बतलाया जा चुका है। बहुत आलस्य और बहुत जागृति ये दोनों एक ही कारणके पृथक् पृथक् परिणाम है—इनमे देखने मात्रका विरोध है। अतिसार और बद्ध-कोष्ठ दोनों अपचेके परिणाम है । अपचेसे किसीको कब्ज होती है और किसीको दस्त लगने लगते हैं । ऐसे बाथ और साथ ही खूराकके उपचारसे बहुत पुरानेसे पुराने अर्श (मसे) बंद हो सकते है। बार-बार और बहुत थूँकका आना भी इस बाथसे बहुत करके बंद हो जाता है । निर्बल मनुष्य ऐसे बाथसे बलवान् हो सकते हैं। इस बाथसे बहुतोंका सन्धिवात मिट गया है । रक्त-स्राव और रक्त-दोषमें यह बाथ बहुत ही उत्तम इलाज है। मस्तक दुखनेवाले मनुष्यको इस बाथके द्वारा बड़ी ही लाभ पहुँच सकता है। स्वयं लुईकूने इस बाथको केनसर (भगंदर) सदृश भयंकर रोगमें भी अनमोल समझता है। गर्भवती स्त्रीको भी इस बाथके द्वारा लाभ पहुँचता है, उसे प्रसवके समय बहुत थोड़ा दुःख भोगना पड़ता है। बालक, जवान, बूढे आदि सभी स्त्री-पुरुष इस बाथको ले सकते है।

इसके सिवाय बाथ लेनेकी एक और दूसरी रीति है। वह कितने ही रोगोंमें बहुत ही उत्तम इलाज है। इस रीतिको 'वेट-शीट-पेक' अर्थात् भींगी हुई चद्दरका बन्धन कहते हैं । इस बाथकी यह रीति है कि खुली हवामें एक इतना बड़ा तख्ता या टेबिल रखनी चाहिए कि जिस पर मनुष्य चित सो सके। उस पर हवाके परिमाणके अनुसार चार या कम-ज्यादा कम्बल लटकते हुए बिछा देने चाहिए। उन पर भींगी हुई दो साफ और मोटी चद्दर बिछा कर सिरहानेकी ओर कम्बलके नीचे

एक तकिया रख देना चाहिए। इसके बाद बीमारको नगा करके—और यदि वह चाहे तो उसे कमरमें एक छोटा कपड़ा पहना कर—चद्दरोंके बीचमें सीधा सुला देना चाहिए। फिर उसके दोनों हाथोंको बगलमें रख कर चद्दर और कम्बलोंको—एकके बाद एक—उस बीमारके शरीर पर लपेट देना चाहिए। पैरों परके हिस्सेको अच्छी तरह पैरों पर लपेट देना चाहिए। उस समय धूप हो तो भिगोया हुआ रूमाल बीमारके मुँह और मस्तक पर लपेट देना चाहिए और नाक सदा खुली रखनी चाहिए। इसके बाद बीमारको एक बार थरथरीसी मालूम देगी, पर फिर थोड़ी ही देर बाद उसे बहुत आराम मालूम देगा और शरीरको सुहाने योग्य गरमी आ जायगी। ऐसी दशामें बीमार ५ से लेकर ६० मिनिट तक या ज्यादा देर तक रह सकता है। अन्तमें इतनी गरमी होती है कि पसीना आने लगता है। कई बार बीमार ऐसी स्थितिमें सो जाता है। भींगी हुई चद्दरसे निकलते ही बीमारको ठडे पानीसे नहलानेकी आवश्यकता है। त्वचाकी अनेक बीमारियों पर यह उत्तम इलाज है। खुजली, दाद, अलाई, छोटी-माता शीतला, साधारण फोड़े, बुखार आदि बीमारियों पर चद्दर बन्धन बड़ा ही गुणकारी है। भयंकरसे भयकर बीमारी इस बाथसे बहुत करके मिट जाती है। शरीर पर लाल चकते पड़ गये हों तो वे एक-दो बार इस बाथके लेनेसे दूर हो जाते हैं। इस बाथको स्वयं लेना या दूसरोंको लिवाना प्रत्येक मनुष्य बहुत ही आसानीसे सीख सकता है और अपने ही अनुभवसे इसकी कीमत कर सकता है। इस बाथमें त्वचाका सारा मैल चद्दरमें आ जाता है। इस लिए जो चद्दर एक बार काममें आ चुकी हो उसे खौलते हुए पानीमें बिना धोये उसी बीमार पर या दूसरे बीमार पर काममें न लानी चाहिए।

अन्तमें जल-चिकित्साके सम्बन्धमें इतनी बात याद रखना आवश्यक है कि चिकित्सा करते रहनेके दिनोंमें कसरत, खूराक आदिकी सँभाल

न रक्खी जायगी तो पूरा लाभ न होगा। वल्कि सम्भव है कि कुछ भी लाभ न हो। सन्धिवातवाला मनुष्य लुईकूनेका 'बाथ' या 'चद्दर-वन्धन' का प्रयोग कर अखाद्य खाने लगे, खुली हवामें न रह कर गंदगीमें पड़ा रहे और शारीरिक कसरत न करे तो अकेले बाथसे उसे कुछ फायदा न होगा। स्वास्थ्यके सारे नियम पालनेके साथ ही पानीके उपचार सहायक हो सकते हैं। यदि अन्यान्य स्वास्थ्य-सम्बन्धी नियमोंके पालनेके साथ साथ जल-चिकित्सा की जावे तो बीमार वहुत शीघ्र स्वास्थ्य लाभ कर सकता है, यह निस्सन्देह है।

---

३ मिट्टीके उपचार।

इस प्रकार जल-चिकित्साके सम्बन्धमें थोड़ी वहुत जानकारीके बाद मिट्टीके उपचारोंके सम्बन्धमें भी हमें थोड़ी वहुत जानकारीकी आवश्यकता है। क्योंकि कितने ही रोगोंमें पानीके इलाजसे भी मिट्टीके इलाज आश्चर्यकारक देखे गये हैं। हमारे शरीरका वहुतसा भाग मिट्टीका बना है, इस कारण यदि हमारे शरीर पर मिट्टीका प्रभाव पढ़े तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। मिट्टीको सब पवित्र मानते है। दुर्गन्ध दूर करनेके लिए मिट्टीसे जमीन लीपी जाती है। सड़ी हुई जगह मिट्टीसे पूरी जाती है। हाथ मिट्टीसे साफ किये जाते हैं। यहाँ तक कि गुप्त अंग भी मिट्टीसे पवित्र किये जाते हैं। योगी-जन सारे शरीर पर मिट्टी लगाये रहते है। इस देश (नाताल) के लोग फोड़े-फुंसियों पर मिट्टीका प्रयोग करते हैं। मुर्दोंको मिट्टीके भीतर गाड़नेसे वे हवाको खराव नहीं कर सकते। मिट्टीकी इस महिमासे हम अनुमान कर सकते हैं कि मिट्टीमें कितने ही खास और उत्तम गुणोंका होना सम्भव है।

जैसे लुईकूनेने पानीके सम्बन्धमें वहुत विचार करके कितने ही अच्छे अच्छे लेख लिखे हैं वैसे ही जुस्ट नामके एक जर्मनने मिट्टीके सम्बन्धमें

बहुत कुछ लिखा है। उसका तो यहाँ तक कहना है कि मिट्टीके उपचा-रसे असाध्य रोग भी मिट सकते हैं। उसने लिखा है कि एक बार उसके पासके गाँवमें एक आदमीको साँपने काट खाया था। बहुतसे आदमि-योंने समझ लिया कि वह मर गया। परन्तु उस समय किसी आदमीने उन लोगोंको सलाह दी कि जुस्टके पास जाकर इसकी जाँच कराई जायगी तो अच्छा होगा। वैसा ही किया गया। जुस्टने उस सर्पके काटे हुए आदमीको पहले मिट्टीमें गड़वा दिया और फिर इसके थोड़ी ही देर बाद निकाल कर देखा गया तो उसे सुध आ गई थी। यह अघटित घटना है। परन्तु जुस्टको झूठ लिखनेका कोई कारण नहीं है। मिट्टीमें गड़वा-नेसे बहुत गरमीका होना तो प्रकट बात है। परन्तु उस साँपके काटे पर मिट्टीके अदृश्य जन्तुओंका क्या प्रभाव पड़ा, इसके जाननेका कोई साधन नहीं है। तब भी इतना तो जान पड़ता है कि मिट्टीमें विषको चूस लेनेका गुण है। इतना होने पर भी जुस्ट लिखता है कि किसीको यह न समझ लेना चाहिए कि साँपके काटे हुए सभी मिट्टीके इलाजसे जी उठते है। परन्तु किसी खास मौके पर मिट्टीका इलाज करना आवश्य-क है। विच्छू और ततैयाके काटे पर मिट्टीका इलाज विशेष उपयोगी है। इनके डकों पर मैंने स्वयं परीक्षा करके देखा है कि इस इलाजसे तुरंत लाभ हुआ है। ऐसे समय डंक पर मिट्टीको ठंडे पानीमें मल कर गाढ़ी गाढ़ी पुलटिस बाँध देनी चाहिए और उस पर पट्टी बाँध देनी चाहिए।

नीचे लिखे हुए उदाहरणोंमें मैंने मिट्टीके उपचारका स्वयं अनुभव किया है। दस्तवालेके पैडू पर मिट्टीकी पुलटिस बाँधनेसे दो तीन दिन-में आराम हो गया है। सिर दर्दवालोंके सिर पर मिट्टीकी पुलटिससे तत्काल लाभ हुआ है। आँखों पर मिट्टीकी पुलटिस बाँधनेसे आँखोंका दर्द मिट जाता है। चोट लग कर सूजन चढ़ गई हो, या न भी चढ़ी

हो तो मिट्टीकी पुलटिससे दोनों दर्द आराम हो जाते हैं। कई वर्ष पहले मैं जब फ्रूटसाल्ट लेता तभी अच्छा रह सकता था। १९०४ में मिट्टीकी उपयोगिता पर मेरा ध्यान गया और तभीसे मुझे फ्रूटसाल्ट वगैरहके लेनेकी किसी दिन आवश्यकता न पडी। जिसे बद्ध-कोष्ठ रहता है उसे पेडू पर मिट्टीकी पुलटिस बाँधनेसे बडा लाभ होता है। पेटमें दर्द होता हो तो मिट्टी बाँधनेसे वह हलका हो जाता है। मिट्टीके बाँधनेसे अतिसार तक मिट जाता है। पेडू और सिर पर मिट्टीके बाँधनेसे जोरका बुखार भी दो-एक घंटेमें कम पड जाता है। फोड़े-फुंसी, खुजली, दाद वगैरह पर मिट्टी बाँधनेसे प्राय बहुत लाभ होता है। फोडोंसे रसी निकलती हो तो मिट्टीकी उपयोगिता कम हो जाती है। जले पर मिट्टी बाँधनेसे जलन कम हो जाती है और और सूजन नहीं चढ़ती। अर्श (मसे) वालेको मिट्टीका बाँधना लाभकारी है। पाला पड़नेसे प्रायः हाथ-पैर सुर्ख होकर सूझ जाते है, उन पर मिट्टी बाँधनेका असर हुए बिना रह ही नहीं सकता। खुजलीवाली वादी पर मिट्टी गुणकारी है। दुखते हुए जोडों पर मिट्टी लगानेसे तुरंत लाभ होता है। इस तरह मिट्टीके बहुतसे प्रयोग करने पर मुझे जान पडा है कि घरू इलाजके तौर पर मिट्टी अनमोल चीज है।

सब प्रकारकी मिट्टीका एकसा गुण नहीं होता। सुर्ख मिट्टी विशेष गुणकारी जान पड़ी है। मिट्टीको हमेशा अच्छी जगहसे खोद कर लानी चाहिए। अगर मिट्टीमें गोबर बहुत हो तो उसे काममें न लेनी चाहिए। मिट्टी बहुत चिकनी न होकर थोडी चिकनी और रेतीली अच्छी होती है। उसमें किसी प्रकारका कचरा वगैरह न होना चाहिए। मिट्टीको बारीक चलनीमें छान कर सदा ठंढे पानीमें भिंगो रखनी चाहिए। आटेको गूँदनेसे वह जितना कठिन रहता है उतनी ही कठिन मिट्टी भी रहनी चाहिए। मिट्टीको बिना इस्त्री किये हुए साफ बारीक कपड़ेमें बाँध

गये। दो प्लेगके बीमार अस्पतालमें भेजे गये। इन दोनोंमें भी एक ही बचा। इस पर मिट्टीकी पुलटिसका इलाज किया गया। यह नहीं कहा जा सकता कि इस बीमारको मिट्टीसे ही लाभ पहुँचा, परन्तु यह कहा जा सकता है कि मिट्टीसे उसे कोई हानि न पहुँची। एक बार दो बीमारोंके फैंफडोंमें सूजन आकर उन्हें बुखार आ गया। वे बेहोश हो गये। उनमें एककी छाती पर मिट्टीकी पुलटिस बाँधी गई। उसके गलेमें होकर खूनके छींछडे गिरते थे। अस्पतालमें ले जानेके बाद डाक्टरके कहनेसे मालूम हुआ कि उसे बहुत ही कम खूराक दी जाती थी और वह भी केवल दूध।

बुखारकी उत्पत्ति बहुत करके कोठेकी खराबीसे ही होती है, अत एव उसका पहला उपाय उपवास है। यह बिलकुल बहम है कि निर्बल या बुखारवाले मनुष्य न खानेसे और भी दुर्बल हो जायँगे। इस बातको हम पहलेके प्रकरणोंसे जान चुके हैं कि जितनी खूराक पच कर खून बन जाय वही कामकी है और बाकी पेटमें पत्थरकी तरह पडी रहती है। बुखारवाले मनुष्यका कोठा बहुत ही मन्द चलता है, उसकी जबान सफेदी लिये हुए या काली होती है और ओठ सूखे रहते हैं। ऐसी स्थितिमें उसे भोजन कराया जायगा तो बुखार और बढेगा—वह कुछ पचा न सकेगा। खानेको न देनेसे कोठेको अपना काम करनेका मौका मिलता है। इस लिए उसे एक-दो या ज्यादा दिन तक उपवास कराना चाहिए। उपवासके दिनोंमें लूईकूनेके कमसे कम दो बाथ सदा लिवाने चाहिए। रोगीसे बाथ न लिये जा सकें तो उसके पेडू पर मिट्टी बाँधनी चाहिए। सिर दुखता हो या गरम हो तो उस पर भी मिट्टीका पट्टा रखना चाहिए। बीमारको ढका हुआ परन्तु खुली हवामें रखना चाहिए। भोजनके समय उसे गरम या ठंडा नारंगीका रस पिलाना चाहिए। रस छना हुआ और उसमें गरम या ठंडा पानी मिला हुआ

होना चाहिए। जहाँ तक हो उसमें शक्कर न डाली गई हो। इस रसका बहुत अच्छा असर होगा। यदि बीमारके दाँत न खटाते हों और वह पी सकता हो तो उसे ऊपर बताई हुई रीतिसे नींबूका रस पिलाना चाहिए। इसके बाद दूसरी बार उसे मसला हुआ आधामें केला खिलानेमें भी कोई हानि नहीं है। केलेको मसल कर उसमें एक चम्मच जैतूनका तैल और आधा चम्मच या एक चम्मच नींबूका रस डालना चाहिए। तीनोंको अच्छी तरह मिला कर बीमारको खिलाना चाहिए। और यदि प्यास लगे तो गरम करके ठंडा किया हुआ पानी या नींबूका रस पिलाना चाहिए, ठंडा पानी न पिलाना चाहिए। पानीके साफ करनेका उपाय पहले प्रकरणमें बतलाया जा चुका है। बीमारको बहुत कम कपडे पहनाने चाहिए और उन्हें सदा पलटते रहना चाहिए। ओढ़नेके लिए पुरता कपडा हो तो अधिक कपडोंकी जरूरत नहीं रहती। इस तरहके उपचारसे मोतीझरेके जैसे भयंकर बुखारवाले रोगियोंको भी आराम हो गया है। इतना ही नहीं, किन्तु इस समय उनका स्वास्थ्य बहुत ही अच्छा है। किनाइन आदि दवा लेनेवाले मनुष्य निरोग जान पड़ते हैं, परन्तु उन्हें दूसरी बीमारियाँ घेरे रहती है। कहा जाता है कि खास करके मलेरिया-वाले रोगी किनाइनसे आराम हो जाते हैं, परन्तु मेरा खयाल है कि उन्हे मलेरियासे शायद ही छुटकारा मिलता है। किन्तु इसके अतिरिक्त ऊपर बतलाये हुए प्राकृतिक उपचारसे मलेरियाके बीमार बिलकुल अच्छे हुए मैने देखे है।

मैने ऐसे बहुतसे बुखारके बीमारोंको देखा है जो केवल दूध पर रहते थे; परन्तु मेरे अनुभवसे बुखारकी प्रारम्भिक दशामें दूध पिलाना हानि करता है; उसे पचाना भी कठिन हो पडता है। दूध पिलाना ही पडे तो गेहूँकी काफी या चावलके थोड़ेसे आटेको पानीके साथ पका कर पिलाना चाहिए। परन्तु हठीले और तेज बुखारमें तो दूध पिलाना ही न चाहिए।

ऐसी हालतमें नींबूका रस बडा लाभकारी है। यह अनुभव-सिद्ध है। जब बीमारकी जबान साफ हो जाय तब उसे केलेकी खूराक देना प्रारंभ करना चाहिए। केला भी ऊपर बताये अनुसार बना कर ही खिलाना चाहिए। बीमारको दस्त न आते हों तो दवा देनेकी जगह थोडा टंकन-खार डाल कर गरम पानीकी पिचकारी लगानी चाहिए। उससे पेट साफ हो जायगा और जैतूनके तैलवाली खूराक उसे साफ दस्त ला देगी।

---

५ कब्ज-संग्रहणी-दस्त-अर्श।

साधारण तौर पर यह बात अचरजभरी जान पडेगी कि इस प्रकरणमें चार बीमारियोंका नाम एक साथ लिखा गया है, परन्तु असलमें इन चारों बीमारियोंका बहुत निकट सम्बन्ध है और हमारे बिना दवाके इलाज भी चारोंके लिए बहुत करके एकहीसे है। जब कोठे पर बहुत बोझ आ पडता है तब शरीरके गठनके अनुसार किसीको कब्ज हो जाती है अर्थात् नियमित दस्त नही होता और न ठीक तौर पर होता है, दस्त जाते समय जोरसे करॉझना पडता है। कुछ समय तक ऐसा होते रहनेसे खून गिरने लगता है या कॉच छिटकने लगती है और किसी समय अर्श (मसे)की बीमारी हो जाती है। किसीको, कोठे पर ज्यादा बोझ पडनेसे दस्त लग जाते हैं। यदि ये दस्त बहुत दिनों तक और बार बार हुआ करें तो उसे संग्रहणी कहते हैं। किसीको मरोडी हो जाती है। मरोडीके समय पेटमें दर्द होता है और ऑव गिरती है।

इनमेंसे प्रत्येक बीमारीवालेको भूख कम लगती है, शरीर फीका पड़ जाता है, शक्ति नहीं रहती, जबान बिगड़ी रहती है और श्वासमे बदबू आने लगती है। कितनेहीका सिर दुखता है और कितनेहीको अन्यान्य रोग भी हो जाते हैं। कब्ज एक ऐसी साधारण बीमारी है कि जिसके

लिए सैकड़ो दवाइयाँ और चूरन बने हैं । *मधर्स-सिगल-सिरप, फ्रूटसाल्ट वगैरह दवाका मुख्य काम ही कब्ज दूर करनेका है । इन दवाओंके द्वारा कब्जियत मिटनेके जैसी जान पड़नेके कारण हजारों मनुष्य इन दवाओंके पीछे हैरान होते हैं । साधारण हकीम या डाक्टर भी कहेगा कि कब्जियत आदि बीमारीकी जड़ बदहज्मी है, अत एव बदहज्मीके कारण दूर कर दिये जायँ तो कोई बिमारी नहीं रह सकती । इन लोगोंमें जो प्रामाणिक है वे तो साफ तौर पर कहते है कि हमारे रोगी अपनी कुटेवोंको तो छोड़ना नहीं चाहते और बीमारी मिटाना चाहते हैं । इसी लिए चूरन, मिक्श्चर वगैरह बनाने पड़ते है । आज-कल विज्ञापनोंमें यह भी लिखा रहता है कि हमारी दवा खानेवालेको किसी प्रकारके परहेज करनेकी जरूरत नहीं है—बीमार मनमाना आहार-विहार कर सकते हैं । उन्हें केवल दवा लेनेसे आराम हो जायगा । इन प्रकरणोंके पढ़नेवाले जान सकेंगे कि इस प्रकारके विज्ञापन केवल धोखा देनेवाले हैं । जुलाब वगैरहका हमेशा बुरा फल होता है । हलकेसे हलके जुलाब भी कब्जियतको मिटा कर शरीरमें दूसरे जहर उत्पन्न करते है । जुलाब लेकर यदि मनुष्य अपनी पुरानी आदतको छोड़ दे और फिर उसे जुलाब न लेना पड़े तो जुलाबसे लाभ हुआ कहा जा सकता है, परन्तु सदाकी भाँति अपनी आदतको जारी रखनेसे तो कब्ज, संग्रहणी आदिके मिट जाने पर भी अन्य नई बीमारियोंके हो जानेकी संभावना है ।

अब ऊपर लिखी हुई बीमारियोंके इलाज पर एक दृष्टि डालिए। इनका पहला इलाज तो यह है कि बीमारकी खूराक कम कर दी जानी चाहिए और उसे भारी खूराक—बहुत घी, शक्कर, रबड़ी वगैरह—खानेको न दी जानी चाहिए । उसे शराब, भंग, चुरुट वगैरहका व्यसन हो तो वह भी छुड़ा देना चाहिए, और खानेको मैदेकी रोटियाँ न दी जाकर खास

* एक अँगरेजी दवा ।

कर हरा मेवा और उसके साथ ओलिव-आइल देना चाहिए। उससे चाय, काफी कोको आदि भी छुड़ा देने चाहिए।

इलाज शुरू करनेके पहले बीमारको ३६ घंटेका उपवास करा कर इसके बीचमें या इसके बाद सोते समय पेडू पर मिट्टीके पट्टे बाँधना चाहिए और दिनमें एक या दो लुईकूनेका बाथ लिवाना चाहिए। हमेशा कमसे कम दो घंटे तक उसे चलाना फिराना चाहिए। ऐसा करनेसे निःसन्देह बीमारको तुरंत ही लाभ होगा। इस इलाजसे भारीसे भारी कब्ज, पेचिस, अर्श और संग्रहणी तकको आराम होते मैंने देखा है। अर्शके लिए इतना कहना है कि इस इलाजसे अर्श बिलकुल मिट नहीं जाता, परन्तु वह तकलीफ बिलकुल नहीं देता। यहाँ तक कि आदमीको इतना खयाल भी नहीं रहता कि मुझे अर्श (मसे) हैं भी। पेचिस-वालेको इतना याद रखना चाहिए कि जब तक आँव या खून गिरता हो तब तक उसे खाना बिलकुल न खाना चाहिए। और जब कुछ खानेकी इच्छा हो तब गरम पानीमें नारंगीका छना हुआ रस मिला कर पीना चाहिए। ऐसा करनेसे भारीसे भारी पेचिस बहुत ही थोडे समयमें मिट जायगी और बीमार तकलीफ न भोगेगा। पेचिसके समय सख्त मरोड़ियाँ उठती हों तो बोतलमें खूब गरम पानी भर कर उससे या गरम ईंटसे पेट सेकना चाहिए। इससे दर्द मिट जायगा। इसके सिवाय और बीमारोंको जैसे खुली हवामें रखनेकी जरूरत है वैसे ही इन बीमारीवालोंको भी खुली हवामें रखना चाहिए।

कब्जमें नीचे लिखा हुआ मेवा खास गुण करता है।

अंजीर, फ्रेंच-प्रून्स (बेर), मुनक्का, काली-मुनक्का, नारंगी, अंगूर (हरीदाख)।

इस कहनेका यह मतलब नहीं है कि भूख न हो तब भी इन मेवोंको खाना ही चाहिए। मरोडी चल रही हो और मुँह खराब हो तो उस

समय इन मेवोंका खाना भी हानिकारक ही है। जब खानेकी जरूरत जान पडे तब ही इनका खाना गुणकारी है। ऊपर लिखे वाक्यका इतना ही अर्थ करना चाहिए।

---

६ छतके रोग—शीतला (चेचक)।

बुखार आदि कुछ बीमारियोंके सम्बन्धमें हम विचार कर चुके। सब बीमारियोंके विषयमें सूक्ष्म विचार करना इन लेखोंकी मनशा नहीं है। और भी एक बात है, जब सब बीमारियोंका बहुत अंशोंमें एक ही कारण समझा जाता है और प्रायः एक ही उपाय समझा जाता है तब एक-एक रोग पर अलग अलग लेख लिखनेकी आवश्यकता भी नहीं है। शीतलाके समान अन्य छूतवाले रोगोंकी उत्पत्तिका कारण भी हम एक ही मानते हैं, अत एव उनका भी अलग विचार करनेकी आवश्यकता नहीं जान पडती, तो भी शीतला पर एक प्रकरण लिखना अयोग्य न होगा।

शीतला निकलनेसे हम बहुत ही डरते हैं। इसके सम्बन्धमें सैकड़ों बहम फैल रहे है। हिंदुस्तानमें तो शीतला एक देवी ही मान ली गई है। उसके नामकी असंख्य मनुष्य मानता करते हैं। यह बीमारी दूसरी बीमारियोंकी भाँति खूनके बिगडनेसे होती है और खूनका बिगडना कोठेके बुखारसे शुरू होता है। शरीर शीतला द्वारा अपने भीतर भरे हुए जहरको बाहर निकालता है। यदि यह विचार ठीक हो तो शीतलासे डरनेकी कोई जरूरत नहीं है। यदि शीतला छूतसे लग ही जाती हो तो जितने मनुष्य शीतलाके रोगीका स्पर्श करें उन सबको शीतला निकल आनी चाहिए। परन्तु हम देखते है कि ऐसा नहीं होता। इस लिए शीतलासे भय खानेकी जरूरत नहीं है; केवल सावधानी रखनेकी

आवश्यकता है। यह नहीं कहा जा सकता कि शीतलाकी छूत होती ही नहीं। जिसका शरीर छूत लगने योग्य है वह यदि शीतलाके रोगीका स्पर्श करे तो उसे रोग लग जाना संभव है। यही कारण है कि जहाँ शीतला निकलती है वहाँ पर वहुतसे मनुष्य एक साथ इस रोगके पंजेमें फँस जाते है। इस भाँति शीतलाको छूतका रोग मान कर इस पर टीका लगाना अच्छा वतलाया जाता है। और लोगोंको वहकाया जाता है कि टीका लगानेसे शीतला नहीं निकलती है। टीकेकी लस गायके स्तनसे निकाली जाती है। इस लसको हमारे शरीरमें प्रविष्ट किया जाता है। और फिर टीकेसे वह लस निकाल ली जाती है। इससे यह लाभ वतलाया जाता है कि चेचक नहीं निकलती। पहले यह माना जाता था कि एक बार टीका लगाये वाद शीतला नहीं निकलती, परंतु जव जान पड़ा कि टीका लगाये वाद वहुत लम्वे समय तक शीतलासे मनुष्य वचा नहीं रह सकता, तव यह कहा गया कि अमुक समयके वाद फिर टीका लगाना चाहिए। अव यह रिवाज है कि जव जव जिन जिन स्थानोंमें शीतला निकले तव तव उन उन स्थानोंमें टीका लगाये हुए और विना टीकेवाले सभी मनुष्योंको टीका लगाना चाहिए। इस प्रकार टीका लगानेवाले वहुतसे ऐसे मनुष्य देखनेमें आये हैं कि जिन्होंने पाँच, छह या इससे भी ज्यादा वार टीके लगवाये है।

टीका लगाना वड़ा ही जंगली रिवाज है। इस जमानेके चलते हुए वहमोंमें यह भी एक जहरी वहम है। ऐसे वहम उन आदमियोंमें भी नहीं देखे जाते जो जंगली कहे जाते है। इस वहमके हिमायतियोंको इतनेसे संतोष नहीं हुआ कि जिसकी इच्छा हो वह टीका लगवाये। वे सवको ही टीका लगवानेके लिए कानूनसे मजवूर करते है। जो टीका नहीं लगवाते उन्हें कानूनी कार्रवाई कर कड़ी सजा दी जाती

है। टीकेकी खोज १७९८ में हुई है। इससे पाठक जान सकते है कि यह बहम पुराना नहीं है। इतनेसे थोड़े समयमें लाखों मनुष्य इस बहम-में फँस गये हैं कि जिसने टीका लगाया वह शीतलासे बच गया। परन्तु ऐसा माननेके लिए कोई प्रबल कारण नही है। यह कोई नहीं कह सकता कि टीका न लगानेसे बड़ी शीतला निकलती ही है। किन्तु इसके विपरीत टीका न लगानेवालोंके शीतला निकलनेके अनेक उदाहरण मिलते हैं। टीका न लगानेवालोंके शीतला निकलनेके उदाहरणोंसे यह नहीं कहा जा सकता कि यदि टीका लगाया जाय तो मनुष्य शीतलासे मुक्त रह सकता है।

टीका एक गंदा इलाज है। इसमें गायकी लस हमारे शरीरमें पहुँचाई जाती है। इतना ही नहीं मनुष्यकी लस भी पहुँचाई जाती है। साधा-रण तौर पर लसको देख कर कई लोग उलटी कर देते है। हाथको यदि लस लग जाय तो वे साबुनसे साफ किये जाते हैं। अगर कोई हमें लस खानेको कहे तो सुन कर हमारा जी मचलाने लगेगा। ऐसी बात कोई हँसीमें भी कहेगा तो हम उससे लड़नेको तैयार हो जायँगे। इतने पर भी शायद ही कभी किसीने इस बात पर विचार किया होगा कि हम टीका लगवा कर लस (सड़ा हुआ खून) खाते हैं। यह बात सब जानते है कि कितनी ही बीमारियोंमें दवा या प्रवाही खूराक शरीरके द्वारा भीतर पहुँचाई जाती है। उसका असर मुँहसे ली हुई खूराककी अपेक्षा शीघ्र होता है। मुँहसे ली हुई वस्तु एकदम रक्तमें जाकर नहीं मिल जाती, परन्तु शरीर द्वारा पहुँचाई हुई वस्तु शीघ्र खूनमें जा मिलती है। इतना ही नहीं, इस उपायसे भीतर पहुँचाई हुई थोड़ीसी भी दवाका तत्काल प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार ली गई दवा या खूराक खानेके समान ही है। इतना होने पर भी शीतलासे बचनेके लिए हम लस खाते हैं। जिस प्रकार यह कहावत है कि डरनेवाले

मौतसे पहले ही मर जाते हैं; उसी प्रकार मातासे मर जाने या बद-सूरत हो जानेके भयसे टीका लगवा कर हम पहले ही मर मिटते हैं।

इस प्रकार लस लेनेमें मुझे तो यह जान पडता है कि हमें धर्म-भ्रष्ट होनेकी भी परवा नहीं है। मांसाहारी मनुष्योंको भी रक्तके खानेकी इजाजत नहीं है। और जीवित प्राणीका रक्त या मांस तो खाया ही नहीं जाता। लस भी जीते हुए प्राणीका खून है और वह भी सडाया हुआ। वही सड़ा खून शरीरके द्वारा हमें खिलाया जाता है। इस प्रकार खून खानेके बदले हजार बार शीतला निकले या तुरंत मौत आ जाय तो भी आस्तिक मनुष्य उसे ही पसन्द करेगा।

इगलैंडके कितने ही विचारशील मनुष्योंने टीकेके द्वारा जो हानियाँ होती हैं उनकी बडे श्रमसे खोज की है। वहाँ पर टीकेका विरोध करनेवाली बडी भारी एक सभा है। उसके सभासद टीका नहीं लगवाते। वे टीका लगानेके अनिवार्य कानूनका विरोध करते हैं। कितने ही इस बात पर जैलमें जा चुके है। वे औरोंको भी समझाते हैं कि टीका न लगवाना चाहिए। इस विषयके कई ग्रन्थ लिखे गये हैं। इस पर खूब वाद-विवाद हुआ है। टीकेके विरोधमें वे लोग नीचे लिखे हुए कारण बतलाते हैः—

(१) गाय या बछडीके स्तनमेंसे लस निकालनेकी क्रियामें लाखों जीवित पशुओं पर बड़ी ही क्रूरता की जाती है। ऐसी निर्दयता मनुष्य-जातिके योग्य नहीं है। इस कारण प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है कि टीकेसे कुछ लाभ होता हो तो भी वह इस प्रकार निर्दयतासे निकाली हुई लसको उपयोगमें न लावे।

(२) इस लससे लाभ कुछ नहीं होता, उलटी हानि ही होती है—मनुष्योंको दूसरे रोगोंकी छूत आ लगती है। वे समझते हैं कि शीतलाके फैलनेके बाद दूसरे रोग फैले है।

(३) मूल पास मनुष्योंके रक्तसे तैयार की हुई होती है; इस लिए वे सब पासें जिन जिन मनुष्योंके रक्तसे बनाई जाती हैं उनमें, उन उन मनुष्योंके अन्य अन्य रोगोंकी छूतका भी आ जाना सम्भव है।

(४) ऐसा विश्वास नहीं दिलाया जा सकता कि टीका लगानेसे मनुष्यको शीतला नहीं निकलती। इस टीकेका निकालनेवाला डाक्टर जेनर कहा करता था कि एक हाथमें टीका लगानेसे मनुष्य सदाके लिए रोगसे छुटकारा पा जाता है। इससे जब पूरा लाभ होता नहीं देख पडा तब यह कहा जाने लगा कि दोनों हाथोंमें टीका लगानेसे शीतला नहीं निकलती। इसके बाद दोनों हाथोंमें एकसे अधिक टीका लगानेकी बात कही जाने लगी। फिर भी जब शीतला निकलने लगी, तब यह कहा जाने लगा कि टीका लगाये बाद यह विश्वास नहीं दिलाया जा सकता कि सात वर्षके बाद भी शीतला न निकलेगी। अब सातकी जगह तीन ही वर्ष कहे जाते है। इस तरह डाक्टर लोग स्वयं भी इस विषयमें अब तक कुछ निर्णय नहीं कर सके हैं। असल बात तो यह है कि टीका लगानेसे शीतला न निकलेगी, यह मानना बिलकुल वहम है—मिथ्या है। यह कोई साबित नहीं कर सकता कि टीका लगानेसे जिन्हें शीतला न निकली उन्हें टीका न लगानेसे अवश्य ही निकलती।

(५) अखीरी दलीलमें वे कहते है कि लस लगाना बिलकुल गंदा रिवाज है और गंदगीसे गंदगीका दूर किया जाना मानना निरा जंगलीपन है। ऐसी ही अन्यान्य दलीलोंसे इस सभाने अँगरेजी प्रजा पर बडा अच्छा प्रभाव डाला है। इगलैड एक ऐसा शहर है जहाँकी बसतीका बहुत बडा हिस्सा टीका नहीं लगवाता। इस शहरके लोगोंमें गिनतीके हिसाबसे रोग बहुत कम देखनेमें आता है। इस सभाके परिश्रमी सभासदोंने खोज करके सिद्ध कर दिया है कि डाक्टर लोग स्वार्थ-वश टीकेके वहमको दूर नहीं होने देते। उन्हें इसमें प्रतिवर्ष प्रजाकी ओरसे हजारों

पौंडकी आय होती है। वे समझ-बूझ कर टीकेसे होती हुई हानिको नहीं देखते। परन्तु इन डाक्टरोंमेंसे भी बहुतोंने यही मत प्रगट किया है कि टीकेका लगवाना बुरा है और कितने ही टीकेके घोर विरोधी है।

कुछ लोग कहेंगे कि टीका लगवानेसे जब इस प्रकार हानि होती है तब हमें वह नहीं लगवाना चाहिए? इसका उत्तर मै तो निर्भय होकर यही दूँगा कि 'नहीं'। इतना होने पर भी एक अपवाद है। मेरा कहना यह है कि जान-बूझ कर अपनी इच्छासे तो किसीको भी टीका न लगवाना चाहिए। परन्तु जहाँ हम रहते हैं और वहाँ टीका लगानेका कानून हो तो हमारा कर्तव्य है कि हम टीका लगवालें। यहाँ (अफ्रिकामें) टीकेके कानूनको तोड़ना महा भयंकर जोखम उठानेके बराबर है। और यदि हम कानूनका सामना करते हैं तो हम पर भारी अपराध लगाये जाते है। जान-बूझ कर सार्वजनिक आरोग्यको जोखममें डालनेका हम पर दोषारोप किया जाता हे। ऐसी स्थितिमें हमारा कर्तव्य है कि जिस बसतीका बड़ा हिस्सा टीका लगवानेमें फायदा समझता हो और हम उस बसतीमें रहते हों तो हमें चाहिए कि उस बड़े भागको हम भय-ग्रस्त न होने दें। हमें ऐसे काम करने चाहिए जिनसे उस भागको भय पैदा न हो। जो मनुष्य मेरे बताये हुए कारणसे टीका लगानेमें धर्म-हानि समझता हो और वह अकेला ही टीकेके विरुद्ध हो तब भी उसे कानूनके विरुद्ध होकर कष्ट उठाने चाहिए। जो मनुष्य केवल शरीर-सुखके विचारसे टीका न लगवाना चाहता हो उसे एकाएक कानूनके विरुद्ध न होना चाहिए। ऐसे मनुष्यमें बहुत ज्ञान और अपना मत दूसरेको समझा सकनेकी शक्ति होनी चाहिए। उसे लोक-मतको पलटनेके लिए तैयार होना चाहिए। जो मनुष्य ऐसा नहीं कर सकता वह अपनी तबीयतको ही ठीक रखनेके लिए लोकमतके विरुद्ध नहीं हो सकता। बहुतसे काम हमें पसन्द नहीं आते तथापि—जिस मंडलमें हम रहते हों उसके

लिए—हम उन्हें करते हैं। समाजके सुभीतेके लिए हमें अपने सुभीतोंको दूर रख देना पडता है। यह एक साधारण नियम है कि बहुमतके सामने एक ही मनुष्य हो सकता है; परन्तु ऐसे मोके धर्म या नीतिके सम्बन्धमें ही मिल सकते हैं। जिसका कोई मत न हो और ऐसे लेखोंसे उत्तेजित होकर वह यदि अपने आलसीपनके कारण टीका नहीं लगवाना चाहे तो ऐसे मनुष्यको कानूनके अधीन हो जाना चाहिए।

टीका न लगवानेवालेको स्वच्छता वगैरहके नियम समझ कर बराबर पालना चाहिए। जो मनुष्य शीतलाकी लस नहीं लेना चाहता; परन्तु विषय-सेवन द्वारा उसकी लस लेता है, या आरोग्यके अन्यान्य नियमोंका भंग कर दुःख भोगता है उसे कोई अधिकार नहीं है कि (जिस देश या समाजमें टीका लगवाना आरोग्यका नियम समझा जाता है) टीकेके वह विरुद्ध खडा हो।

इस प्रकार शीतलाके सम्बन्धमें विचार कर टीकेकी हानियाँ दिखलाई गई। अब शीतलाको रोकनेके उपायोंके सम्बन्धमें विचार करनेकी आवश्यकता है। उन मनुष्योंको शीलता होना ही सम्भव नहीं है जो हवा, पानी और खूराकके सम्बन्धमें बतलाये हुए नियमोंको पालते हैं, क्योंकि उनके खूनमें शीतलाके रोगाणुओंको नष्ट कर देनेका गुण होता है।

जिन्हें शीलता निकली हो उनके लिए भिंगोई हुई चद्दर (वेट-शीट-पेक) का उपचार एक आश्चर्यकारी दवा है। इससे जलन कम होगी और निकले हुए व्रण थोडे ही दिनोंमें हलके पड जायँगे। उन पर मल्हम वगैरहके लगानेकी कुछ जरूरत नही है। यदि एक-दो जगह मिट्टीकी पुलटिस बाँधनेका मोका हो तो बाँध देनी चाहिए। खूराकमें भात, नींबू और हलका मेवा—रुचिके अनुसार—खाना चाहिए। हलके मेवेके कहनेका यह अभिप्राय है कि शीतलाकी गरमीके समय खजूर, बादाम आदि

पौष्टिक मेवा खाना उचित नहीं है । 'वेट-शीट-पेक' से एक हफ्तेके भीतर-भीतर शीतलाके व्रण हलके हो ही जाने चाहिए। यदि न हों तो समझना चाहिए कि अब भी शरीरमें जहर भरा हुआ है और वह निकलता जा रहा है। यह माननेके लिए कोई कारण नहीं है कि शीतला महारोग है, बल्कि वह तो इस बातकी निशानी है कि शरीरमें भरा हुआ जहर निकल कर शरीर आरोग्य लाभ कर रहा है।

यह विचार बहुतसे रोगोंके सम्बन्धमें लागू है; परन्तु शीतलाके सम्बन्धमें तो और भी विशेष लागू है। बीमारी मिटे बाद बीमार निर्बल हो जाता है। कितने ही रोगी पीछेसे अन्यान्य बीमारियोंसे तकलीफ पाते हैं। इसका कारण बीमारी नहीं होती; परन्तु बीमारीको दूर करनेके लिए किये हुए विविध उपचार हैं। बुखारमें जो क्विनाइन ली जाती है उससे कान बहरे हो जाते हैं, किसीको 'क्विनिनिझम *' नामक भयंकर बीमारी हो जाती है। व्यभिचारसे पैदा हुए रोगोंको दूर करनेके लिए पारे आदिका उपयोग किया जाता है, परन्तु इसके साथ ही यह किसीसे छिपा हुआ नहीं है कि पारेसे उत्पन्न होनेवाले अन्य रोगोंसे मनुष्य सदा पीड़ित रहते हैं। इससे सिद्ध होता है कि दवा लेनेसे बीमारी नहीं मिटती; किन्तु अन्यान्य रोग भी हो जाते हैं । कब्ज पर जुलाब लेनेवालोंको अर्श हो जानेके अनेक उदाहरण देखे गये हैं। इस लिए बीमारीके कारणोंको ढूंढ़ कर उन्हें रोकना चाहिए और बीमारीको दूर करना चाहिए। इससे बाद प्राकृतिक नियमोंका अच्छी तरह पालन करना चाहिए। इसके समान कोई भस्म नहीं है। धातुओंको मार कर लोहभस्म आदि भस्में तैयार की जाती है और कहा जाता है कि ये बहुत ही उत्तम ओषधियाँ हैं, परन्तु यह बात झूठ है। इतना अवश्य है कि इन ओषधि-

* यह बीमारी क्विनाईन खानेसे ही होती है । इस बीमारीमे मनुष्य बहरा और शून्यके जैसा हो जाता है।

योंमें गुण अवश्य हैं; परन्तु इनसे जितना ही शरीरको अच्छा लाभ हुआ जान पड़ता है उतने ही मनोविकार बढ़ जाते हैं । मतलब यह कि इनसे मनुष्यको नुकसान ही होता है । शीतलाके रोगीके लिए इन दवाओंका लेना विशेष उपयोगी माना जाता है । शीतला एक बार निकले बाद बहुत करके रोगीको फिर नहीं निकलती । क्योंकि उसके शरीरमेंसे सारा विष निकल कर वह प्रायः बहुत ही तन्दुरुस्त हो जाता है ।

जब शीतला मुरझा कर उसके व्रण सूख जावें तब बीमारके शरीरमें सदा जैतूनका तैल लगाते रहना चाहिए, उसे हमेशा नहलाना चाहिए। ऐसा करनेसे शीतलाके व्रण बिलकुल मिट कर उन पर नई चमडी आ जायगी ।

---

७ छूतकी और और बीमारियाँ ।

शीतलाके सम्बन्धमें अच्छी तरह विचार किया जा चुका । इसी प्रकार अराई, छोटी माता वगैरहको भी शीतलाकी छोटी बहिनें समझनी चाहिए। जिस प्रकार ये सब छूतकी बीमारियाँ हैं उसी प्रकार प्लेग, कॉलेरा, पेचिश आदि भी छूतकी बीमारियाँ हैं। पर विशेष यह है कि शीतलाकी तरह हम इन बीमारियोंसे नहीं डरते। इसका कारण यह है कि इन बीमारियोंसे मौत नहीं होती; और न शरीर ही बे-डोल होता है । इसके सिवाय और सब असर इनका शीतलाके समान ही होता है ।इनकी छूत भी शीतलाके ही जैसी होती है। इन बीमारियोंमें ठंडे पानीके उपचार और 'वेट-शीट-पेक' बडा लाभकारक है।ऐसे समयमें खूराक बहुत ही हलकी और सादी खानी चाहिए । केवल हरे मेवेसे यदि काम चलाया जा सके तो ये बीमारियाँ बहुत जल्दी कमजोर पड़ जाती हैं। प्लेग महा भयंकर बीमारी है। १८९६ से हिन्दुस्थानमें इस रोगसे लाखों मनुष्य मर

चुके है। डाक्टरोंने बहुत कुछ सिरपच्ची की, परन्तु वे इसका कोई उपाय न खोज सके। इस समय शीतलाके टीकेके सदृश इसका भी टीका लगाया जाता है। जब टीका लगाया जाता है तब प्लेगका ज्वर बहुत हलका पड जाता है, उस समय डाक्टर लोग समझाते हैं कि जिनके शरीरमें इस लसका प्रवेश हो चुका है उन्हें प्लेग नहीं हो सक्ता। यह भी एक शीतलाके टीकेके जैसा ही ढोंग है और उतना ही पाप-पूर्ण है। जिस भाँति शीतलाके टीकेके विषयमें कहा गया है कि टीका न लगानेसे यह निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता कि शीतला निकले हीगी उसी भाँति प्लेगके टीकेके सम्बन्धमें भी यही कहा जा सकता है। प्लेगकी अभी तक कोई दवा नहीं निकली है, इस लिए इसमें पानीके इलाजसे लाभ होगा ही यह निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सक्ता, परन्तु जिसे मौतका डर नहीं है और जो भगवान् पर भरोसा रखते है उनके लिए नीचे लिखा हुआ उपाय बतलाया जा सकता है:—

(१) बुखार आनेके समय या उसके थोडे भी चिह्न जान पडने लगे तब वेट-शीट-पेक अर्थात् भींगी हुई चद्दर-बंधनका उपचार करना चाहिए।

(२) गाँठकी जगह मिट्टीकी भारी पुलटिस बाँधनी चाहिए।

(३) बीमारको खानेको न दिया जाना चाहिए।

(४) यदि खुश्की जान पड़े तो उसे नींबूका ठंडा पानी पिलाना चाहिए।

(५) बीमारको खुली और साफ हवामें सुलाना चाहिए।

(६) उसके पास एक आदमीके सिवाय दूसरेको न जाने देना चाहिए। बीमार यदि किसी अन्य इलाजसे बच सकता है तो वह इस इलाजसे भी अवश्य बच सकेगा।

प्लेगकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें अब तक कोई निश्चित बात मालूम नहीं हुई। बहुतोंका मत है कि यह बीमारी चूहोंसे फैलती है। यह बात निराधार नहीं है। जहाँ प्लेग हो वहाँ पर चूहेवाले घरोंको साफ करनेकी बड़ी जरूरत है। अनाज आदिको इस तरह रखना चाहिए कि वह चूहोंको खानेको न मिल सके और न वे आ पावें। चूहोंके बिलोंको बन्द कर देना चाहिए। जिस घरसे चूहे न हटाये जा सकें उस घरको ही खाली कर देना चाहिए। परन्तु प्लेग न होनेके लिए सबसे अच्छी बात तो यह है कि मनुष्यको पहलेसे ही सावधान रहना उचित है। उसे पवित्र, उत्तम और थोड़ा भोजन करना चाहिए, व्यसन छोड़ देने चाहिए; कसरत करते रहना चाहिए, खुली हवामें रह कर मकानको साफ-सुथरा रखना चाहिए और स्वयं खूब स्वच्छताके साथ रहना चाहिए, जिससे कि उसे प्लेगकी हवा छूने ही न पावे। मनुष्यको इस भाँति सदा ही स्वच्छ रहना चाहिए, परन्तु प्लेगके समय तो खास तौरसे स्वच्छता पर ध्यान देनेकी आवश्यकता है।

प्लेगसे भी विशेष भयंकर और शीघ्र उत्पन्न होनेवाला रोग संनिपातज्वर है। जिसे अँगरेजीमें 'न्यूमोनिक-प्लेग' कहते हैं। इसमें बीमारका दम उखड़ जाता है, बुखार बड़े जोरका चढ आता है और बीमार लगभग बे-होश हो जाता है। इस कालज्वरसे मनुष्य शायद ही बच पाता है। १९०४ में यही प्लेग जोहान्सबर्गमें हुआ था। वहाँ पर २३ मनुष्योंमेंसे केवल एक मनुष्य बच सका था। उसका कुछ हाल पहले लिखा जा चुका है। इस बीमारके लिए भी ग्रन्थि-प्लेगके लिए बतलाया हुआ इलाज उपयोगी है। परन्तु इसमें पुलटिस सीनेके दोनों हिस्सों पर बाँधनी चाहिए। यदि 'वेट-शीट-पेक'—चद्दर-बंधनके उपचारका समय न रहा हो तो उसके सिर पर मिट्टीकी बारीक पुलटिस रखनी चाहिए। इस रोगके भी इलाज करनेकी अपेक्षा इसे पहलेसे ही रोक

नेका प्रयत्न करना सहज और उत्तम है । वे प्रयत्न प्लेगके प्रकरणमे बतलाये जा चुके है । उनका उपयोग करना बुद्धिमानी है ।

हैजेकी बीमारी हमें बडी भयंकर जान पड़ती है, परन्तु असलमें वह प्लेगके समान भयंकर नहीं है । वह प्लेगसे बहुत ही हलकी है । उसमें 'चद्दर-बन्धन' काम नहीं देता, क्योंकि उसमे बीमारके गोले चढ जाते हैं और जाँघोंमे गाँठें बँध जाती हैं। ऐसे समय पेट पर मिट्टीकी पुलटिसका बाँधना उपयोगी हो सकता है, पर उससे भी विशेष लाभकारी यह है कि जहाँ जहाँ गाँठें हों वहाँ वहाँ पर गरम पानीकी बोतलोंसे सेक करना चाहिए । बीमारके पेर आदिको राईके तेलसे मलना चाहिए । उसे खानेको न देना चाहिए । बीमारको हिम्मत बँधाते रहना चाहिए, जिससे वह घबरा न जाय । बीमारको एकदम दस्त लगते हों तो बार वार उसे पलँगसे न उठा कर, पलँग पर ही एक बरतन रख कर उसमें पाखाने फिरा देना चाहिए । यदि तुरंत ऐसे उपायोंकी योजना कर दी जाय तो बीमारको तकलीफ पहुँचना बहुत ही कम सम्भव है । हैजेके समय भी उससे बचनेके कई अच्छे अच्छे उपाय है । हैजा बहुत करके गरमीके दिनोंमें होता है । इन दिनोंमें हम बिना कुछ सोचे विचारे कच्चे-पक्के और सडे फलोंको खाने लगते हैं । साधारण समयमें हमें फल खानेकी इतनी आदत नहीं होती । गरमीकी मौसममें एक तो अनेक प्रकारके फल होते हैं और दूसरे वे सस्ते होनेके कारण बहुत खानेमें आते है । इसके सिवाय भी हमे अपना नियमित भोजन करना ही पडता हे । इससे एक दम इन फलोंका हम पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ता है । हमारे शरीरमें पेट वगैरहकी कोई-न-कोई बीमारी बनी ही रहती है । इस कारण ऐसे फल वगैरह शरीरके अनुकूल न पड़नेसे हैजा हो जाता है । उस समय बीमारके पाखानेकी कुछ फिकर नहीं की जाती । उसके जन्तु हवाको खराब करते है । गरमीकी मौसममें सूखा होनेसे पानी भी

अच्छा नहीं रहता, वह गंदा हो जाता है, उसमें जीव पड़ जाते हैं और हम लोग वही पानी बिना गरम किये और बिना छाने पी जाते हैं। ऐसी सूरतमें बीमारी क्यों न हो! प्रकृतिने हमारे शरीरको मजबूत बनाया है, इस लिए हम टिक रहे हैं। अन्यथा हमारे आचरण तो ऐसे हैं कि हमारा निकाल बहुत ही जल्दी हो जाना चाहिए।

हैजके समय नीचे लिखे अनुसार सावधानी रखनेकी आवश्यकता है। खूराक हलकी खानी चाहिए। अच्छा मेवा जरूर खाना चाहिए; परन्तु उसकी देख-भाल पहले ही अच्छी तरह कर लेना आवश्यक है। लोभ या स्वादके वश लगे हुए आम या दूसरे फल कभी न खाना चाहिए। साफ हवामें रहना चाहिए। पानी हमेशा गरम कर खादीके कपड़ेसे छाना हुआ पीना चाहिए। बीमारका पाखाना जमीनके भीतर गाड़ कर उस पर धूल पूर देनी चाहिए। पाखाना गये बाद उस पर हर समय राख डालनेका रिवाज जारी रक्खा जाय तो हैजेका बहुत ही कम भय रह जाना सम्भव है। वास्तवमें देखा जाय तो इस नियमको सर्वदा पालन करनेकी आवश्यकता है। बिल्ली भी अपने पंजोंसे जमीनको खोद कर पाखाना फिरती है और फिर उस पर पैरोंसे मिट्टी पूर देती है। पर हम छूआ-छूतकी घृणाके मारे ऐसा नहीं करते और इसी कारण फिर हम इन बीमारियोंको पंजेमें फँस जाते हैं। राख न मिले तो सूखी मिट्टीका ही उपयोग करना चाहिए। मिट्टीके ढेले हों तो उन्हें फोड़ कर उनकी धूल बना लेनी चाहिए।

उड़ती हुई पेचिस सबसे कम भयंकर बीमारी है। इसमें यदि बीमारको खानेको न देकर उसके पैडू पर मिट्टीकी पुलटिस बराबर बाँधी जाय तो बीमारी बिलकुल मिट जाती है। बीमारके पाखानेको ऊपर लिखे माफिक जमीनमें गाड देनेकी आवश्यकता है। पानीके विषयमें भी हैजेके समान सावधानी रखनेकी जरूरत है।

अखीरमें यह कहना है कि ऊपर बतलाई हुई छूतकी बीमारियोंमें बीमार, उसके मित्र और सम्बन्धियोंको हिम्मत हारनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। डरनेसे बीमार घबरा कर जल्दी मर जाता है और उसके आस-पास रहनेवाले इष्ट मित्रों या सम्बन्धियोंको भी बीमारी हो जाना संभव है।

---

८ प्रसव (सौरी)।

साधारण रोगोंके सम्बन्धमें हम विचार कर चुके। इन प्रकरणोंके लिखनेका यह मतलब नहीं है कि दुनियाके सारे ही रोगोंके विषयमें लिखा जाय, परन्तु असल अभिप्राय यह है कि प्रसिद्ध प्रसिद्ध रोगोंका विचार कर रोग मात्र और उनके उपचारकी एकता बतला दी जाय। जो लोग रोगोंसे खूब घिरे हुए हैं और मौतसे डरते हैं उनके सामने तो कैसे भी ग्रन्थ क्यों न रक्खे जायँ वे तो वैद्य-हकीमोंकी शरण जावेंगे ही। ये प्रकरण अधिकसे अधिक इतना ही बतला सकते हैं कि साधारण रोगी मनुष्य अच्छे होकर आरोग्य-रक्षाके नियमोंका पालन करने लगें तो वे फिर बीमार होकर भयंकर रोगोंके पंजेमें न फँसेंगे। इसके सिवाय दूसरा यह भी कारण है कि बहुत थोडे मनुष्योंमें ऐसा करनेकी हिम्मत होती है कि वे आरोग्य-रक्षाके नियमोंका बराबर पालन कर वैद्य-डाक्टरोंकी शरण न लें, ऐसे लोगोंके लिए भी ये छोटे छोटे प्रकरण उपयोगी हों। अब हम ऐसी दशामें पहुँचे हैं कि सौरी, बच्चोंकी सँभाल और आकस्मिक विपत्तिके ऊपर भी थोड़ा थोड़ा विचार करें।

सौरी (प्रवस) के विषयको लोगोंने बातका बतंगड़ बना डाला है। निरोग स्त्रीको प्रसवके समय भयंकर कष्ट नहीं होता। गाँवके लोगोंमें प्रसव एक मामूली बात समझी जाती है। गर्भवती स्त्रियाँ अखीर

तक अपना काम करती रहती हैं और प्रसव होते समय कुछ कष्ट नहीं पातीं। ऐसे भी उदाहरण देखे गये हैं कि गूजरोंकी स्त्रियाँ प्रसव हुए बाद तुरंत ही काममें लग जाती हैं। दूसरे प्राणियोंमें तो हम देखते है कि प्रसवसे वे बिलकुल तकलीफ नहीं पाते।

तब शहरकी औरतें क्यों तकलीफ भोगती हैं? प्रसव होते समय क्यों उन्हें असह्य वेदना होती है? प्रसव होनेसे पहले और बाद क्यों उनकी खास तौर पर सेवा-शुश्रूषा करनी पड़ती है? इन प्रश्नों पर विचार करना आवश्यक है।

शहरकी औरतोंका रहन-सहन अस्वाभाविक है। उनकी खूराक, उनका पहनाव प्राकृतिक नियमोंके विरुद्ध है। परंन्तु इसके सिवाय एक बड़ा भारी कारण और भी है। वह यह कि कम उमरकी लडकियोंको गर्भवती होने पर भी पुरुष उनका संग करना नहीं छोडते और प्रसव हुए बाद भी—प्रसव-शय्यासे उठते ही—उनके साथ ऐसा व्यवहार करने लगते है कि उससे बेचारी स्त्रियाँ फिर गर्भ धारण कर लेती हैं। बतलाइए फिर ऐसी स्त्रियाँ ही दु:ख न भोगें तो और कौन भोगे? देशमें लाखों लड़कियों और स्त्रियोंकी ऐसी भयंकर और दया करने योग्य दशा हो रही है। ऐसे शहरके जीवन और नरकमें कुछ भेद नहीं है। जब तक मनुष्य ऐसे राक्षस रहेंगे तब तक स्त्रियोंको चैन नहीं हो सकता। बहुतसे पुरुष स्त्रियोंको दोष देते हैं। पर इन प्रकरणोंका उद्देश दोषोंकी तुलना करना नहीं है। दोष चाहे दोनों पक्षका हो, चाहे एक पक्षका, दोष है जरूर। अपने इन दोषोंको जान लेनेके बाद माता-पिता और बालक पति-पत्नीको सावधान हो जाना चाहिए। जब तक बालपनेकी और गर्भ रहे बाद तथा प्रसव हुए बादकी विषय-प्रवृत्ति न रुकेगी तब तक सुख-पूर्वक प्रसव हो नहीं सकता। प्रसवके साधारण कष्टोंको स्त्रियाँ इस विश्वासके कारण सह लेती है कि प्रसवमें तो वेदना होती ही है, महीने भर निर्बल रहना

ही पड़ता है। पर उन्हें इस विषयका वास्तविक ज्ञान न होनेसे संतान दिन दिन निर्बल, अज्ञान और निस्तेज उत्पन्न होती जाती है। यह महा भयंकर परिणाम है। इसे रोकनेके लिए प्रत्येक मनुष्यको अखंड प्रयत्न करना चाहिए। यदि एक स्त्री और एक पुरुषने भी इस अनाचारको छोड़ दिया तो उतना ही जगत्को लाभ पहुँचेगा। इसमें किसीको किसीकी राह देखनेकी जरूरत नहीं है।

इसका मतलब यह है कि सबसे पहले पुरुषोंको गर्भवती स्त्रीके साथ संग करना छोड़ देना चाहिए। इसके बाद नौ मास पर्यन्त स्त्री पर बहुतसी जिम्मेवरीका बोझा पड़ जाता है, इस लिए यह बात समझने योग्य है कि बालकके चरित्रका बहुत कुछ आधार माताके इन नौ महीनेके रहन-सहन परही है। माताएँ प्रेमसे परिपूर्ण होंगी तो उनका बच्चा भी प्रेम करनेवाला होगा। माता क्रोधी होगी तो बच्चा भी क्रोधी होगा। कहनेका अभिप्राय यह है कि नौ महीने तक माताकी आन्तरिक वृत्तियाँ बहुत ही अच्छी रहनी चाहिए। उसे सदा पवित्र कामोंमें लगे रहना चाहिए। दयालु और उदार-हृदय होना चाहिए। निर्भय और निश्चिन्त होना चाहिए। उसे अपने हृदयमें पशुत्त्व न आने देना चाहिए; झूठ न बोलना चाहिए और न निकम्मी बातोंमें समय खोना चाहिए। जो स्त्री इन नियमोंका पालन करेगी उसका बच्चा तेजस्वी हुए बिना न रहेगा।

गर्भवती स्त्रीके लिए जिस भाँति मानसिक शुद्धता रखनेकी आवश्यकता है। उसी भाँति शारीरिक शुद्धि रखनेकी भी आवश्यकता है। उसके लिए सदा स्वच्छ वायु-सेवनकी बड़ी जरूरत है। गर्भवती स्त्रीको ज्यादा श्वास लेने पडते है, अत एव उसे विशेष उत्तम हवामें रहना चाहिए। उसे अन्न उतना ही खाना चाहिए जितना कि वह नियमित रूपसे पच जाय और साथ ही वह उत्तम हो। उसे पिछले

प्रकरणोंमें बतलाई हुई उत्तम खूराक खानी चाहिए । इस समय जैतूनके तैल और गेहूँके पदार्थ उसे उतने ही खाने चाहिए जितने वे पच जायँ । यदि कब्ज रहती हो तो दवाके लिए दौड़नेकी कोई जरूरत नहीं है, खुराकमें जैतूनका तैल बढ़ा देना चाहिए । जी मचलाता हो और उलटी होती हुई जान पड़े तो नींबूका रस—बिना शक्कर डाले—पानीमें मिला कर पी लेना चाहिए । इन महीनोंमें मिरच-मसाला वगैरह सर्वथा छोड़ ही देना चाहिए ।

कितनी ही स्त्रियोंको इस समयमें खब दोहद होते हैं । उन्हें दूर करनेका उत्तम इलाज यह है कि उन स्त्रियोंको 'क्यूनी-बाथ' लेना चाहिए । इस बाथके लेनेसे शरीरकी शक्ति बढ़ेगी, कान्ति बढ़ेगी और प्रसवके समय उन्हें वेदना भी कम होगी । कई स्त्रियोंने स्वयं इसका अनुभव किया है । दोहदके समय मन पर भी कुछ अंकुश रखना चाहिए । जिस चीज पर चित्त ललचावे उसे एक-दो बार छोड़ देनेसे चित्त वश हो सकता है । माता-पिताको चाहिए कि वे सदा गर्भस्थ बच्चेकी रक्षाका विचार करते रहें ।

पुरुषका कर्त्तव्य है कि वह ऐसे समय स्त्रीके साथ लड़ाई-झगडा कर उसे घबराहटमें न डाले । वह ऐसे काम करता रहे कि जिससे स्त्री खुश रहे और सुख पावे । उस पर घरके कामका ज्यादा भार हो तो उसे हलका कर देना चाहिए । इसके लिए बड़ी सावधानी रखनी चाहिए कि गर्भवती स्त्रीके पेटमें कोई दवा न जाय । गर्भवती स्त्रीके लिए थोड़ी देर खुली हवामें घूमना-फिरना भी बहुत आवश्यक है ।

---

९ बच्चोंकी सँभाल।

दाईके विषयोंको लिखनेका इस लेखका उद्देश नहीं है। हम यहाँ पर बालक पैदा हुए बादकी दशाके सम्बन्धमें कुछ विचार करेंगे। जिन्होंने पिछले प्रकरण पढ़े हैं वे समझ सकेंगे कि प्रसवके समय प्रसूतिको बन्द हवावाली अँधेरी कोठड़ीमें, गन्दे बिछौने पर, रखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है और न इसी बातकी आवश्यकता है कि उसकी खाटके नीचे अँगीठियाँ रख कर उसे आगकी गरमीसे झुलस दिया जाय। प्रसूतिको अँधेरेमें रखनेका रिवाज कितना ही पुराना क्यों न हो, पर वह बड़ा घातक है और हवा बंद करनेका रिवाज तो उससे भी अधिक घातक है। नीचे जलती हुई अँगीठी रखनेकी रीति अनावश्यक ही नहा, जोखम भरी भी है। सरदीकी मौसममें प्रसूतिके लिए विशेष गरमीकी आवश्यकता है; परन्तु इसके लिए उसे अधिक ओढाना चाहिए। कोठेमें सरदी रहती हो तो वहाँकी हवाको गरम करनेके लिए अँगीठीको बाहर सुलगा कर—जब धुआँ न रहे तब—भीतर ले जाना चाहिए; परन्तु उसे प्रसूतिकी खाटके नीचे रखनेकी जरूरत नहीं है। प्रसूतिके बिछौनेमें गरम पानीकी बोतलें रखनेसे भी गरमी आ सकती है। प्रसूतिको मैले-कुचैले और गंदे कपड़ोंमें सुलानेका रिवाज भी बड़ा ही घातक और वहम भरा हुआ है। सौरीसे उठे बाद सब कपड़े धो-साफ कर उपयोगमें लाये जा सकते हैं।

बच्चेकी तबीयतका आधार माँकी तबीयत पर है। इस कारण ऊपर बतलाई हुई सावधानी रखनेके सिवाय माताको ऐसी खूराक देनी चाहिए जो उसकी प्रकृतिके अनुकूल हो। गोंद वगैरह खानेको देनेसे कुछ फायदा नहीं जान पडता। इसके अतिरिक्त यदि प्रसूतिको केले वगैरह मेवेके साथ जैतूनका तेल मिला कर गेहूँकी खूराक खिलाई जाय तो उससे उसके शरीरमें गरमी रहेगी और दूध बहुत अच्छा उतरेगा। जैतूनके तैलके

कारण दूध रेचक रहेगा और इससे बच्चेको साफ दस्त आयगा। बच्चेको कुछ भी कष्ट जान पड़े तो माताकी प्रकृति देखनी चाहिए। बच्चेको दवा देना उसे खो बैठनेके बराबर है। बच्चोंका कोठा बहुत नाजुक होता है, इस कारण उन्हें दवा वगैरहका जहर फौरन चढ जाता है। इस समय माताको ही दवा देनी चाहिए, क्योंकि दवाके सूक्ष्म गुण दूधमें आ जाते हैं। प्रायः देखा जाता है कि बच्चेको खाँसी हो जाती है या दस्त बन्द हो जाते हैं। ऐसी दशामें घबड़ा कर इधर उधर दौड़-धूप करनेकी कोई जरूरत नहीं है। एक-दो दिन देख कर उसका कारण जानना चाहिए और फिर उसे दूर करनेका यत्न करना चाहिए। ऐसा करनेसे रोग अपने आप दूर हो जायगा। व्यर्थकी दौडा-दौड़ करनेसे बच्चेकी तबीयत और भी अधिक बिगड़नेकी संभावना रहती है।

बच्चेको हमेशा गुनगुने पानीसे नहलाते रहना चाहिए। उसे कम कपड़े पहनाने चाहिए। कुछ महीनों तक यदि कपड़े बिलकुल ही न पहनाये जायँ तो और भी अच्छा है। एक छोटीसी नरम सफेद चद्दरमें बच्चेको लपेट कर ऊपरसे उसे गरम कपड़ा ओढा देना सबसे अच्छा है। ऐसा करनेसे बच्चेको हमेशा कपढ़े पहनानेकी दिक्कत दूर हो जायगी, कपड़े कम खराब होंगे और बच्चेके शरीरका गठन नाजुक न होकर मजबूत होगा। बच्चेकी नाल पर बारीक कपड़ेको चौहरा करके रखना चाहिए और उस पर पट्टा बाँध देना चाहिए। नाल पर डोरी बाँधनेका जो रिवाज है वह बहुत खराब है। पट्टेको सदा खोलते रहना चाहिए। नालके आस-पासका भाग यदि गीला देख पड़े तो उस पर स्वच्छ चावलोंका छना हुआ बहुत ही बारीक आटा रूईसे लगाना चाहिए, इससे उसका गीला-पन मिट जायगा।

जब तक माताके स्तनोंमें खूब दूध आता हो तब तक बच्चेको दूसरी खूराक देनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। जब दूध कम होने लगे तब

गेहूँको सैक कर पीस लेना चाहिए । इस आटेमें गर्म पानी डाल कर और थोड़ासा गुड़ मिला कर पिलानेसे यह दूधके जैसा ही गुण करता है। अथवा आधे केलेको जैतूनके तैलमें खूब मिला कर बच्चेको खिलाया जाय तो और भी विशेष लाभकारी है। यदि गायका दूध पिलाना हो तो पहली बार तीन भाग दूधमें एक भाग पानी मिला कर उसे गरम कर लेना चाहिए और जब उसमें एक उफान आ जाय तब वह बच्चेको पिलाना चाहिए। इसमें थोडासा साफ गुड़ मिलाना चाहिए। गुडकी जगह शक्कर डालनेसे नुकसान होता है। बच्चेको धीरे धीरे हरा मेवा अधिक अधिक खिलानेकी तजवीज करनेसे उसका रक्त जन्मसे ही सुधरता जायगा और बालक तेजस्वी और बलवान् होगा। बच्चोंके दाँत निकलते ही या इससे भी पहले कई माताएँ उन्हें दाल-भात, शाक आदि देने लगती हैं, पर ऐसा करना बहुत ही खराब है। बच्चोंको चाय-काफी कभी न पिलानी चाहिए।

बच्चा जब बडा होकर चलने-फिरने लगे तब उसे कपडे पहनाने चाहिए। जूतेकी उस समय भी उसके लिए कोई जरूरत नहीं है। बच्चोंको काँटोमें चलना नहीं पडता। इस कारण विना जूतेके चलने-फिरनेसे उनके पैर मजबूत होंगे। बचपनसे जूते पहनानेसे खूनकी गति बडी कठिनाइसे होती है, नंगे पैर रहनेसे उसमें फिर यह बाधा न आयगी। बच्चोंको शोभाके लिए रेशमी या जरीके कपड़े—लहँगा, टोपी तथा हार, कड़े आदि जेवर पहनाना गिरा जंगलीपन और घातक रिवाज है। हमारा यह मानना केवल अज्ञान और मिथ्याभिमान है कि ऐसा करके हम स्वाभिविक सुन्दरताको बढा रहे हैं।

बच्चेकी शिक्षा जन्मसे ही प्रारभ हो जाती है, यह बात हमें भूल न जानी चाहिए। बच्चेके सच्चे शिक्षक उसके माता-पिता ही है। बच्चोंको धमकाना, उनके शरीर पर बोझा लादना और उन्हें ठूँस-ठूँस कर खिलाना शिक्षाके

नियमका भंग करना है। यदि बालकके माता-पिता चिड़चिड़े स्वभाव या नाजुक मिजाकके होंगे तो बालक भी उन्हींके जैसा होगा, बात-चीतका ढंग भी उसमें माता-पिताके सदृश आवेगा। यदि वे तुतला कर बालते होंगे तो वह भी तुतला कर बोलेगा, उनके मुखसे गालियाँ निकलती होंगी तो बच्चा भी गालियाँ देना सीखेगा, माता-पिता अनीति करते होंगे तो बच्चा भी अवश्य अनीतिका अनुसरण करेगा, और मा-बाप जैसा खाते-पीते होंगे बच्चा भी वैसा ही खाना-पीना सीखेगा। इस भाँति जो शिक्षा बालक घरमें लाभ करता है वह पीछे कहीं नहीं सीख पाता। कहावत प्रसिद्ध है 'बाप जैसे बेटे' यहाँ पर बापका अर्थ मा-बापसे है।

इस प्रकार विचार करनेसे जान पड़ता है कि माता-पिताका कर्तव्य कितना नाजुक है। मनुष्य-जातिका सबसे पहला कर्त्तव्य यह है कि वह अपने बच्चोंको सच्चरित्र बनावे और उन्हें ऐसी शिक्षा दे कि वे स्वयं शोभा-सम्पन्न होकर अपने बड़ोंकी भी शोभा बढावें। फल और वृक्षोंके सम्बन्धमें हम देखते हैं कि केलेके वृक्ष पर केले ही फलते हैं और अच्छे वृक्ष पर अच्छे ही फल आते है। उसी भाँति अच्छे जानवरके अच्छे ही बच्चे होते हैं। मनुष्य इस नियमका भंग करते हैं, और इसी कारण पवित्र मा-बापके बच्चे भी फिर अपवित्र होते हैं, स्वस्थ मा-बापोंकी सन्तान अस्वस्थ देख पडती है। इसका मुख्य कारण—एक मात्र कारण—यही है कि हम मा-बापकी पदवीके योग्य न होनेकी दशामें भी प्रायः अपनी स्वच्छन्दतासे मा-बाप बन जाते हैं। फिर बच्चोंके स्वार्थकी सँभाल किसे रह सकती है? परन्तु नीतिशाली माता-पिताओंका तो यह कर्तव्य है कि वे अपने बच्चोंका अच्छी तरह पालन-पोषण करें। इसके लिए माता और पिता दोनोंको सुशिक्षित होना चाहिए। जो माता-पिता ऐसी शिक्षा पाये हुए नहीं हों और यदि वे अपनी भूलको समझ लें तो उन्हें चाहिए कि वे अपने बच्चोंको दूसरे सुशिक्षित नीतिमान् मनुष्योंकी संरक्षतामें

रख दें। यह आशा करना व्यर्थ है कि पाठशालाओंमें जाकर बच्चे सच्चरित्र होंगे। सच्चरित्रता सीखनेका एक ही मार्ग है और वह यह कि बच्चोंको सदा अच्छे संयोगोंमें रक्खा जाय। घर और पाठशालामें जुदी जुदी प्रकारकी शिक्षा मिलनेसे बच्चे कभी नहीं सुधर सकते। इन विचारोंके अनुसार शिक्षा देनेका कोई समय नियत नहीं है। बच्चा जबसे जन्म लेता है तभीसे उसकी शारीरिक, मानसिक और आत्मिक या धार्मिक शिक्षा शुरू हो जाती है। शुद्ध ज्ञान वह जबसे तुतला कर बोलने लगता है तबसे शुरू होता है। और अक्षरोंका ज्ञान वह माता-पिताके पास खेल ही खेलमें प्राप्त कर लेता है। प्राचीन समयमें ऐसा ही होता था। पाठशालाओंमें पढ़ानेका रिवाज तो अब चला है। माता-पिताका बच्चोंके प्रति जो कर्त्तव्य है उसका यदि वे बराबर पालन करें तो यह नहीं कहा जा सकता कि उनके बालक कितने ज्यादा उन्नत हो सकते हैं—उनकी उन्नतिकी सीमा निश्चित नहीं की जा सकती। परन्तु देखते है कि हम बच्चोंको अपने खिलौने समझते हैं। हम उनका झूठा लाड़-प्यार कर—उन्हें सुन्दर कपड़े-लत्ते आदि पहना कर—बचपनसे ही बिगाड़ देते हैं। और फिर हमारे झूठे लाड़-प्यारमें आकर वे जो कुछ करते हैं हम उन्हें बे-रोकटोकके करने देते हैं। हम स्वयं कंजूसी कर उन्हें कंजूस बनाते हैं; विषय-लोलुप बन कर उनके सामने विषयीपनका उदाहरण रखते हैं, आलस्यमें अपना समय खोकर आलसी बनाते हैं, गंदे रह कर उन्हें गंदा रहना सिखाते हैं, झूठ बोल कर उन्हें झूठ बोलना सिखाते है। जब हमारी यह हालत है तब फिर हमारी सन्तान निर्बल, दुराचारी, झूठी, विषयी, स्वार्थी, आलसी, लालची आदि हो तो आश्चर्य ही क्या है? इन वचनों पर समझदार माता-पिताको बहुत विचार करना आवश्यक है। हिंदुस्तानका आधा भविष्य तो उन माता-पिताओं पर ही निर्भर है।

आकस्मिक विपत्तियाँ।

१० डूबना।

कितने ही रोगोंके सम्बन्धमें हम विचार कर चुके। अब आकस्मिक विपत्तियोंके सम्बन्धमें भी कुछ विचार करना उचित समझते हैं। इस विषयका साधारण ज्ञान सभीको होना चाहिए कि यदि किसी मनुष्यका प्राण किसी आकस्मिक-विपत्तिसे जा रहा हो तो उस समय उसे सहायता पहुँचाई जा सके, और इस प्रकारकी शिक्षा बालबच्चोंको बचपनसे ही दी जानी चाहिए, जिससे उनमें दयालुता बढ़ती रहे।

पहले हम डूबे हुए मनुष्यकी सेवा-शुश्रूषाका विचार करते है। इंगलैंडमें एक परोपकारिणी सभा है। उसका काम आकस्मिक विपत्तिके समय सहायता पहुँचानेका है। इस विषयमें उसने कितनी ही बहुमूल्य सूचनाएँ प्रकट की है। उनमेंसे प्रधान प्रधान सूचनाए कुछ परिवर्तनके साथ घटा-बढ़ा कर नीचे लिखी जाती हैं।

कहा जाता है कि मनुष्य श्वास रुके बाद पाँच मिनटसे ज्यादा कदाचित् ही जीता रहता है। इस कारण डूबे हुए मनुष्यको पानीसे निकाले बाद उसमें बहुत ही कम अंशमें जीवन रह जाता है। उसमें जीवन बनाये रखनेके लिए बहुत शीघ्र उपाय किये जाने चाहिए। एक तो कृत्रिम रीतिसे उसके श्वासोच्छ्वास जारी कर देने चाहिए और दूसरे उसे गरमी पहुँचाई जानी चाहिए। उपचारका विचार करते समय हमें यह बात भूल न जानी चाहिए कि उस समय बीमारका जो हम तुरंत उपचार करना चाहते हैं वह नदी, तालाब आदि ऐसे स्थानों पर करना पडता है जहाँ पर सब साधन नहीं मिलते। डूबे हुए मनुष्यके पास उस समय दो-तीन मनुष्य हों तो उसकी ठीक तौर पर सेवा-शुश्रूषा हो सकती है। सहायता करनेवाले मनुष्योंमें समय-सूचकता, धैर्य और स्फूर्ति होनी चाहिए। उस

समय यदि वे स्वयं घबरा उठेंगे तो उनसे कुछ न हो सकेगा। इसके सिवाय यदि वे लोग अपनी अपनी इच्छाके अनुसार काम करनेकी सलाह देने लगेंगे तो भी बीमारको न बचा सकेंगे। उस समय तो उन सबमें जो होशियार हो उसीके कहनेके अनुकूल सबको काममें लग जाना चाहिए।

बीमारको बाहर निकाले बाद तुरन्त ही उसके गीले कपडे निकाल कर अपने पास जो कुछ कपडा हो उससे उसका शरीर पोंछ डालना चाहिए। इसके बाद उसके ललाट पर हाथ रख कर एक मिनट भरके लिए उसे औंधा सुला देना चाहिए और उसकी छाती पर हाथ रख कर मुँहकी ओरसे पानी, कचरा वगैरह निकाल डालना चाहिए। इस तरह पानी निकालते समय उसकी जीभ बाहर निकल आवेगी, उसे रूमाल वगैरह किसी कपडेसे पकड रखनी चाहिए। और इस तरह जब तक उसे चेत न हो जाय तब तक जीभको पकडे ही रहना चाहिए।

इसके बाद उसे चित सुला कर उसके सिर और छातीका भाग पैरोंकी अपेक्षा कुछ ऊँचा रखना चाहिए। फिर एक आदमीको घुटने टेक कर बीमारके सिरकी ओर बैठ, उसके हाथोंको धीरे धीरे उठा लम्बे और सीधे करना चाहिए। ऐसा करनेसे उसकी पसलियाँ ऊँची होंगी और बाहरकी हवा उसके शरीरके भीतर प्रवेश कर सकेंगी। इसके बाद ही उसके हाथों-को टेढे कर उन्हें उसकी छाती पर दबाने चाहिए। ऐसा करनेसे बीमा-रकी पसलियाँ दब कर उसके शरीरसे श्वास निकलने लगेगा। इसके सिवाय गरम और ठंडा पानी चुल्लूमें भर-भर कर बीमारकी छाती पर छींटते रहना चाहिए। यदि उस समय आग सुलगाई जा सके या कहीं आसपाससे लाई जा सके तो लाकर उससे सैक कर, बीमारको गरमी पहुँचानी चाहिए। उस समय हमारे पास जितने कपडे हों उन्हें बीमारको ओढ़ा कर उसका शरीर खूब मलना चाहिए, जिससे उसे गरमी आ जाय। इन सब उपयोंको बहुत देर तक करते रहनेकी आवश्यकता है। हमें एक-

दम बीमारकी ओरसे आशा छोड़ बैठना उचित नहीं है। डाक्टर वेहिगने लिखा है कि इन उपायोंके करते रहने पर कभी कभी पॉच पॉच घटे बाद बीमारको श्वास आते देखा गया है। इस कारण उत्साह-पूर्वक बडी शीघ्रताके साथ उपर्युक्त उपचारोंके करते रहनेकी जरूरत है। यदि बीमारमें कुछ चेतना आ गईसी जान पड़े तो उसी समय उसे कुछ गरम चीज पिलानी चाहिए। गरम पानीके साथ नारंगीका रस या तज, लौग और काली मिरचका काढ़ा बना कर, पिलानेसे उसमें अधिक चेतना आ सकेगी। अथवा तम्बाकू सुँघानेसे भी लाभ पहुँचना संभव है। बीमारको उस समय घेरे रह कर निकम्मे खडे रहनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। उसे खुली हवा लगने देनी चाहिए। उसे खुली हवा जितनी ही अधिक लगेगी उतना ही अधिक लाभ होगा।

ऐसे बीमारके मर जानेके साधारण चिह्न ये है:—उसका श्वास बन्द हो जाय, छाती पर हाथ या नली रखनेसे उसमें कुछ धबकारा न जान पड़े, नाड़ियॉ बंद हो जायॅ, ऑखें अध-खुली रह जायॅ, जबड़े भिड जायॅ, उँगलियॉ मुड जायॅ, जीभ दॉतोंके बीच दब जाय, नाक पर ललाई छा जाय और सारा शरीर फीका पड़ जाय। इसके सिवाय उसके नाकके पास मोरका पींख रखनेसे वह हले-चले नहीं, और काच रखनेसे उस पर श्वासकी भाफ न जमे। ये सब चिह्न एक साथ दीख पडें तो समझना चाहिए कि रोगी मर गया। परन्तु डाक्टर मूरका कहना है कि इन सब चिह्नोंके मौजूद रहते भी, कई बार देखा गया है कि उसमेंसे जीव नहीं निकला है। उनका कहना है कि मर जानेका सच्चा चिह्न शरीरका सड़ने लगना है। इतना समझे बाद हम यह सहज ही समझ सकते हैं कि बीमारकी बहुत समय तक सेवा किये बाद भी जब उसके जीनेके कुछ आसार न देख पडें तब ही हमें उसकी आशा छोडनी चाहिए, पहले नहीं।

---

११ जलना ।

किसी भी मनुष्यके कपड़े आदि जल उठते है तो हम घवरा जाते हैं। यह बात जले हुए को जलानेके जैसी है। जले हुए मनुष्यकी सहायता करनेकी जगह उलटा हम उसे महा कष्टमें डाल देते है। इस लिए जल जाने पर क्या उपचार करने चाहिए, इस बातको जान लेना हमारा कर्त्तव्य है।

जिसके कपडे सुलग उठे हों उसे एकदम घबरा न जाना चाहिए। यदि सिर्फ कपडेका एक ही छोर सुलगा हो तो तुरंत उसे हाथोंसे शीघ्रताके साथ मसल डालना चाहिए। यदि सारा भाग जल उठा हो तो उसी समय धूलमें लौटने लग जाना चाहिए। शतरंजीके समान कोई मोटा कपडा मिल जाय तो शीघ्र उसे शरीर पर लपेट लेना चाहिए। और यदि पानी मिल जाय तो उसे शरीर पर डाल लेना चाहिए। आगके बुझते ही देखना चाहिए कि कहीं शरीर जला तो नहीं है। यदि जला हो तो वहाँ पर कपडेका चिपक जाना सम्भव है। उस कपडेको उखाडना ठीक नहीं है। जहाँ पर कपडा चिपका हो उसे वहीं रहने देकर बाकीका हिस्सा कैंचीसे काट डालना चाहिए। उस समय इस बातकी खूब सँभाल रखनी चाहिए कि चमडी न उखडने पावे। इसके बाद तुरंत साफ मिट्टीकी पुलटिस जले हुए सब स्थानों पर बाँध कर ऊपरसे पट्टा बाँध देना चाहिए। इससे जलन बिलकुल मिट जायगी और बीमार बहुत कम कष्ट भोगेगा। यदि कपडा चिपक रहा हो तो उस पर भी पुलटिसका पट्टा बाँधनेमें कुछ हानि नहीं है। उस पट्टेको सूखते ही उसे फिर पलट देना चाहिए। उस समय ठंडे पानीसे डरनेका जरा भी भय नहीं है।

समय पर जिसे यह उपाय न सूझ पड़े उसके लिए नीचे कुछ अन्य उपचार लिखे जाते है। ये उपचार अँगरेजीकी पुस्तकके आधारसे लिखे गये है। केलेके हरे पत्ते पर जैतूनका तैल या मीठा तैल चुपड़ कर उसे

जली हुई जगह पर बाँधना चाहिए। पत्ता यदि न मिल सके तो बारीक कपडेको तैलमें भिगो कर बाँध देना चाहिए। इसके सिवाय अलसीके तैल और चूनेके पानीको बराबर लेकर, अच्छी तरह मिला कर, उपयोगमें लाया जाय तो भी लाभ होगा।

चिपका हुआ कपडा यदि न निकाला जा सके तो गुनगुने दूध और पानीसे उसे धीरे धीरे भिगोना चाहिए। और जब वह खूब भींग जाय तब उसे धीरे धीरे निकाल डालना चाहिए। पहली बार बाँधे हुए तैलके पट्टेको दो दिनमें खोलना चाहिए। इसके बाद हमेशा नये पट्टे बदलते रहना चाहिए। जले हुए स्थानों पर यदि फौले पड गये हों तो उन्हें फौड़ डालना चाहिए, परन्तु चमड़ीको निकाल डालनेकी कोई जरूरत नहीं है।

जलनेसे यदि केवल चमड़ी ही लाल हुई हो तो उस पर मिट्टीके पट्टे बाँधनेके समान एक भी उत्तम इलाज नहीं है। उससे तुरंत जलन बन्द हो जाती है। ऊँगलियाँ जली हों तो उन पर साफ पट्टा बाँध कर इस बातके ध्यान रखनेकी आवश्यकता है कि वे परस्पर छू न सकें। कितनी ही बार अपने ऊपर तेजाबके गिर जानेसे लोग जल जाते हैं उस समय भी ये उपचार बड़ा काम दे सकते है।

---

१२ सर्पका काटना।

मनुष्य सदासे साँपसे डरता आया है। सर्पके सम्बन्धमें जो भ्रम चले आते है उनका कुछ अन्त नहीं है। साँपका नाम लेने तकसे हम डरते है। हिन्दुओंमें साँपकी पूजा होती है। नागपंचमीका दिन खास तौर पर सर्प-पूजाका दिन है। यह एक स्थूल मान्यता चली आती है कि शेषनाग पर सारी पृथ्वीका भार है। भगवान् स्वयं शेषशायी अर्थात् शेषनाग पर सोनेवाले है।

शिवजीके गलेमें सापोंके हारकी कल्पना की गई है। यह कह कर साँपमें बुद्धि और ज्ञान माने गये हैं कि अमुक विषयका हजार मुखके शेषनागसे भी वर्णन नहीं हो सकता। इसी तरहके कुछ विचार क्रिश्चियन धर्मके भी हैं। अँगरेजी भाषामें एक तुलना की गई है, उसमें दिखलाया गया है कि साँपकी बुद्धिके समान हमारी बुद्धि होनी चाहिए। करकोटक नागने नलको काट-कर उसका बड़ा उपकार किया था। उसने उस पर जहरका प्रभाव डाल कर उसे कुरूप बना दिया था, जिससे कि जंगलमें फिरते हुए उस पर किसीकी कु-दृष्टि न पडे। बाईबिलमें साँपको शैतानका रूप भी बतलाया गया है। कहा जाता है कि साँपने हवा बीबीको ललचाया था।

इस तरह साँपके विषयमें अनेक तरहकी मान्यता और दन्त-कथाएँ प्रचलित है। साँपके डरके सम्बन्धमें तो हम कुछ सोच-समझ भी सकते हैं, परन्तु यदि साँपका जहर शरीरमें पूर्ण प्रवेश कर जाय तो फिर हमारी मृत्यु ही होती है, और मृत्युको हम चाहते नहीं, इसी लिए साँपसे डरते हैं। यह भी जान पडता है कि भयके कारण भी साँपकी पूजा होती है। यदि साँप बहुत ही छोटा जन्तु होता तो इतना भयंकर होने पर भी कदाचित् इतना न पूजा जाता, परन्तु वह बडा विशाल, खूब-सूरत और विचित्र प्रकारका प्राणी है, इसी कारण उसकी पूजा होती है।

सर्पमें बुद्धिका आरोप क्यों किया गया, इस बातके जाननेके लिए विशेष विचार करना पडता है। वर्तमान समयके पाश्चात्य विद्वान् कहते है कि सर्पमें बुद्धि है ही नहीं। उनकी शिक्षाके अनुसार जहाँ सर्प देख पड़ें वहीं उसे मार डालना चाहिए। हिन्दुस्तानमें सर्प-दंशसे प्रतिवर्ष २०,००० मनुष्योंके मरनेकी सरकारने गणना की है। सम्भव है कि मृत्यु-संख्या इससे भी अधिक हो। प्रत्येक जहरीले साँपके मारनेवालेको सरकार कुछ इनाम भी देती है। तब यह बात देखनी चाहिए कि इससे हिन्दुस्तानको कुछ लाभ भी हुआ है क्या? यह तो एक साधारण अनु-

भवकी बात है कि सॉप एकाएक किसीको नहीं काटता, उसे जव हम छेड़ते है तभी वह काटता है। क्या यह बात उसके ज्ञानको नहीं सूचित करती? कदाचित् ज्ञान उसमें न भी हो तो उसकी निर्दोषताको तो वह बतलाती ही है। सर्प अपने बचावके लिए दॉतोंको काममें लाता है और ऐसा मनुष्य भी करते हैं; फिर वही अपराधी क्यों? ऐसी हालतमें सॉपोंको मार कर हिन्दुस्तान या किसी अन्य देशको सर्प-रहित करनेका प्रयास करना हवाके साथ आलिङ्गन करनेके समान है। किसी खास हिस्सेमें सॉपोंका आना-जाना रोका जा सकता है। उधर आते हुए सॉपोंको मार डालनेसे दुसरे सॉप आते हुए रुक जायेंगे। वे समझ लेंगे कि उधर जाना मौतके पंजेमें फॅसना है। परन्तु ऐसा बहुत कम हिस्सेके लिए किया जा सकता है। हिन्दुस्तानके जैसे विशाल देशके लिए तो यह साहस कभी सफल नहीं हो सकता अर्थात् सॉपोंको मार कर उन्हें जड-मूलसे उखाड़ फैंकनेका प्रयास पानीमें पैसे फैंक देनेके समान है।

सॉपोंको भी परमेश्वरने ही पैदा किये हैं। ईश्वरके सारे कामोंको समझनेकी हममें शक्ति नहीं है। उसने सॉप सिंह, चीते, बिच्छू आदिको इस इच्छासे तो बनाये ही नहीं कि हम उन्हें मारें। यदि सॉप अपनी सभा करके विचार करें कि मनुष्य हमें जहॉ पाते हैं वहीं मार डालते है, अत एव ईश्वरने सॉपोंको केवल मनुष्योंके मारनेके लिए ही बनाया है तो क्या यह विचार ठीक समझा जायगा? नहीं। इसी तरह सर्पके सम्बन्धमें हमारा विचार भी भ्रम-पूर्ण समझा जाना चाहिए।

योरपमें सैंट फ्रांसिस नामक एक महायोगी हो गया है। वह जंगलमें सर्पादि जीव-जन्तुओंमें फिरता रहता था तो भी उसे वे तकलीफ नहीं पहुॅचाते थे, इतना ही नहीं, उसके साथ वे मैत्री रखते थे। हिन्दुस्तानके जंगलोंमें हजारो योगी-महात्मा रहते हैं। वे सॉप, तेंदुए, सिंह आदिमें निर्भयताके साथ फिरते हैं। उन्हें कभी उनके द्वारा कष्ट हुआ नहीं सुना

गया । कोई कहेगा कि सर्पके काटने या फाड़ खानेवाले जीवोंसे उनका भी क्षय तो होता ही होगा और यह वात सम्भव भी है । परन्तु यह तो समझमें आ सकता है कि सर्पादि जन्तु इतने अधिक हैं और साधु-योगी इतने कम है कि यदि हिंस्र जन्तु उनके पीछे ही पड़ जाते हों तो उनसे एक भी साधु-योगी न वचने पावे । और इस वातको हम जानते तथा मानते भी है कि साधु-महात्मा इन जानवरोंका सामना करनेका अपने पास कोई साधन नहीं रखते । इससे यह सिद्ध होता है कि कितने ही भयंकर प्राणी भी कितने ही योगी-महात्माओंके साथ मित्रता रखते हैं या उन्हें सताना नहीं चाहते—उन्हें निर्भय आने-जाने देते हैं । मैं तो इस वातका माननेवाला हूँ कि यदि हम किसी जीवके साथ वैर-भाव न रक्खें तो वे भी हमारे साथ वैर-भाव न रक्खेंगे । दया और प्रेम मनुष्यका महान् गुण है । इस गुणके विना कोई ईश्वरकी भक्ति नहीं कर सकता । हमें सारे मतोंमें थोड़ी-वहुत इस वातकी झलक देख पडती है कि दया धर्मका मूल है ।

और एक वात है । सर्पादिकी उत्पत्ति और उनका क्रूर स्वभाव यह हमारे स्वभावकी ही प्रतिध्वनि क्यों नहीं हो सकती ? मनुष्योंमें क्या कम घातकता है ? हमारी जीभमें सदा सर्प-दंश भरा रहता है । हम तेंदुए और सिंहकी तरह अपने भाइयोंको ही फाड़ खाते हैं । हमारी धर्म-पुस्तकोंमें लिखा है कि मनुष्य जव निर्दोष हो जायगा तव सिह और वकरी भी मित्रता करने लगेंगे । हमारे शरीरमें जव तक भेड़ और भेड़ियेकी लडाई चला करेगी तव तक जगत्-शरीरमें वैसी लडाई होती ही रहेगी । हम जगत्के दर्पण-स्वरूप हैं । जगत्के सारे भाव हमारे शरीर-जगत्में प्रतिम्वित है । यदि हम इन्हें पलटें तो जगत्के भाव पलटे जा सकते हैं । जो मनुष्य अपने भावोंको पलटता है उसके सम्वन्धमें जगत् पलटता जाता है । यह ईश्वरकी महालीला है—खूवी है, और

इसी खूबीमें हमारे सुखका आधार है। हमें औरोंकी राह न देख कर अपने भावोंको ठीक करना चाहिए।

सर्प-दशके विषयमें इस तरह बढा कर लिखनेका मतलब यह है कि सर्प-दंशके स्थूल उपाय बतलानेकी अपेक्षा जरा गहराईमें उत्तर कर ऐसे चमत्कार-पूर्ण उपाय बतलाये जायँ जो हमें सारे भयोंसे बचानेवाले हों। इस कारण उपर्युक्त इलाजके करनेका एक भी मनुष्य यदि यत्न करे तो यह लेख व्यर्थ न होगा। और भी एक बात है। यह पहले ही कहा जा चुका है कि आरोग्यके प्रकरण सिखानेका मतलब केवल शरीरके आरोग्यसे ही नहीं है, सब प्रकारके आरोग्यसे है।

वर्तमान समयके खोज करनेवाले भी इतना तो कहते हैं कि "जिसका शरीर आरोग्य-पूर्ण है, जिसका खून जोशमें उबल नहीं उठता और जिसकी खूराक सात्विक है उस मनुष्यको एकाएक साँपका जहर नहीं चढता। इसके विपरीत जिसका रक्त शराब वगैरहके पीने या गरमी उत्पन्न करनेवाली खूब मसालेकी बनी हुई खूराकके खानेसे तप रहा हो उसके शरीरमें साँपका जहर तुरंत फैल जाता है और वह शीघ्र मर जाता है। एक लेखकने तो यहाँ तक लिखा है कि जो मनुष्य नमक वगैरह छोड देता है और केवल फलादि पर निर्वाह करता है उसका रक्त ऐसा स्वच्छ हो जाता है कि वह सब प्रकारके विषोंका सामना कर सकता है। यह बात कहाँ तक सत्य है सो अनुभव-पूर्वक नहीं कहा जा सकता, और जिसने एक दो वर्षसे नमक वगैरह छोड़े हों उसे मान लेना चाहिए कि बहुत समयके दुरुपयोगसे जो रक्त बिगड़ा है वह एक-दो वर्षमें शुद्ध नहीं हो सकता।

प्रयोगोंके द्वारा यह भी देखा गया है कि जो मनुष्य डरा करता था या क्रोधसे तप्त रहता था उस पर जहरका असर उसी समय हुआ है। क्रोध और भयके समय नाडी जल्दी जल्दी चलती है और हृदयमें धड़

न भी शीघ्रतासे होने लगती है। इस बातको प्रत्येक मनुष्य अनुभवसे जान सकता है कि जब जब रक्त बडे जोरसे फिरने लगता है तब तब वह गरम हो जाता है। क्रोधादिसे उत्पन्न हुई गरमी वास्तविक गरमी नहीं है। इस कारण वह नुकसान करती है। क्रोध एक प्रकारका बुखार है। इसमें कुछ सन्देह नहीं है कि ऐसी स्थितिमें जहर बहुत जल्दी अपना असर कर जाता है। इससे हम समझ सकते है कि सर्पादिके जहरसे बचनेका सबसे अच्छा उपाय तो यह है कि हम सात्विक—कुदरती—खूराक खावें, क्रोध न करें, डरें नहीं, सर्पके काट खाने पर भी 'हाय मर गये' ऐसा विश्वास कर मरनेके पहले ही न मर मिटें, अपने पवित्र जीवनकी श्रेष्ठता पर भरोसा रक्खें और अन्तमें इस बातको सोच कर धैर्य रक्खें कि ईश्वरने जितना जीवन प्रदान किया है उतना तो हम भोगें हीगे।

सर्प दंशसे होनेवाली मौतोंमें बहुतसी मौतें तो अयोग्य इलाज और भयसे होती हैं। यह बात पोर्ट-इलिझाबेथके संग्रहालयके उच्चाधिकारी मि० फीट्झसीमनने अच्छी तरह सिद्ध कर दी है। उन्होने बहुत वर्षोंसे सॉपोंके सम्बन्धमें अभ्यास किया है और सॉपके जहरके सम्बन्धमें प्रयोग भी किये है। अलग-अलग सॉपोंकी जानकारी बतला कर उनके इलाज भी उन्होंने बताये हैं। उनका कहना है कि बहुतसे आदमी भयके कारण जोखममें पडते हुए अनुभव किये गये हैं और कई घातक इलाजसे मौतके मुखमें पडे है।

सब साँप जहरी नहीं होते और जहरी सॉपोंके भी सबके जहरसे तुरंत मौत नहीं होती। एक बात और भी है कि महा विषधर सॉपोंको भी सदा ऐसे मौके नहीं मिलते कि वह सारी जहरकी थैलीको हमारे खूनमें उलट दे। ऐसा समझ कर किसी भी मनुष्यको—जिसे सॉप काट

खाय—सहसा भयभीत न होना चाहिए। आज-कल ऐसे इलाज काममें लाये जाने लगे हैं जिन्हें वह स्वयं कर सकता है, और वे ये हैं:—

जहाँ पर साँपने काटा हो, उस जगहसे ऊपरकी ओर, बड़े जोरसे एक रूमाल बाँध कर उसमें मजबूत पैंसिल या लकड़ीके टुकड़ेसे बल दे देना चाहिए। बाँधनेका अभिप्राय यह है कि नसोंके जरिये जहर आगे न बढे। इतना किये बाद चाकूकी बारीक नोकसे सर्पके दंशकी जगह आध इंच गहरा छेद कर, उस जगहका खून निकाल देना चाहिए। फिर उसमें 'परमेंगनेट आफ पोटास' नामक क्षारकी लाल-काली बुकनी भर देनी चाहिए। यह बुकनी बहुत बढ़िया और साँपके काटेकी अमोघ ओषधि है। ऐसी नलियाँ एक शिलिंग—बारह आने—में बाजारमें बिका करती हैं, जिनमें एक ओर तो बलवाला अनीदार छोटासा चाकू होता है और दूसरी ओर यह बुकनी रक्खी जा सकती है। यदि इस इलाजका साधन उस समय हमारे पास न हो तो वह घाव किसी दूसरे मनुष्यको या स्वयं साँप काटनेवालेको चूसना चाहिए; और चूसे हुए खूनको थूकते जाना चाहिए। जिसके मुँहमें घाव पड रहे हों उससे चूसनेका काम न लिया जाना चाहिए, क्योंकि यह जहर चूसना है। यह इलाज सर्प-दंशके पाँच-सात मिनिटके भीतर भीतर ही किया जाना चाहिए, तभी काम देता है, रक्तमें जहरके मिल जाने बाद आराम होना कठिन है। मिट्टीके प्रयोग करनेवाले जुस्टने लिखा है कि उसने साँपके काटनेसे मृत-सदृस जान पड़नेवाले मनुष्यको मिट्टीके प्रयोगसे आराम किया है। उसने एक ऐसे बीमारको एक गढा खोद कर उसमें सुला दिया और उस पर खोदी हुई मिट्टी डाल दी। मिट्टीने उस बीमारको गरमी पहुँचा कर उसके जहरको चूस लिया। बीमार उठ खड़ा हुआ। ऐसे ही और भी कई उदाहरण जुस्टने दिये हैं। सर्प-दंशके विषयमें मेरा निजी अनुभव नहीं है, परन्तु मिट्टीके अन्यान्य प्रयोग किये बाद मिट्टी पर मेरी अचल श्रद्धा

है। जहाँ पर दंश लगा हो उस जगहको छेद कर लाल वुकनी भरे वाद या चूसे वाद उस पर मिट्टीकी आध इंच मोटी, लंबी और पोली पुलटिस बाँध देनी चाहिए। जैसे कि यदि हाथमें दंश लगा हो तो सारे हाथको पुलटिससे लपेट देना चाहिए। हर एक आदमीको चाहिए कि वह टीनके किसी वर्तन या डिब्बेमें मिट्टीको सदा भर रक्खे। यह मिट्टी पीस-छान कर रक्खी रहनी चाहिए। उसे बाहर धूपमें इस तरह ऊपर रखनी चाहिए जिससे उसमें पानी न जा पावे। फटे हुए कपड़ोंके पट्टे भी तैयार करके रख छोड़ना चाहिए। यह तैयारी सर्प-दंशके ही लिए नहीं, अनेक आकस्मिक विपत्तियोंके लिए भी काम देती है।

यदि बीमार बे-होश होने लगे या उसके श्वासोच्छ्वास बंद होते जान पड़ें तो पानीमें डूबे हुए मनुष्यके लिए जो कृत्रिम श्वासोच्छ्वासके उपाय बताये हैं उन्हींका यहाँ भी प्रयोग करना चाहिए। वह बे-होश होता हो तो उसे गरम पानी या लवंग और तजकी उकाली देनी चाहिए। उसे खुली हवामें रखना चाहिए, परन्तु इस बात पर ध्यान रखना चाहिए कि वह ढका हुआ रहे। उसका शरीर ठंडा होता हुआ जान पड़े तो शरीरके आस-पास गरम पानीकी बोतलें रखनी चाहिए या गरम पानीमें निचोड़ी हुई फला-लेनकी गद्दी रख कर उसे गरमी पहुँचानी चाहिए।

---

१३ विच्छू वगैरहका काटना।

हम लोगोंमें कहावत प्रसिद्ध है कि विच्छूके डंककी वेदना किसीको भी न हो। विच्छूके डंककी बड़ी ही सख्त वेदना होती है। सर्प-दंशकी अपेक्षा भी विच्छूके डंककी वेदना तीव्र और असह्य होती है। इतने पर भी हम सर्पहीसे अधिक डरते हैं; क्योंकि उसके दंशमें मौतका भय है। विच्छूके काटनेसे बहुत करके मौत नहीं होती। डाक्टर

मूरका कहना है कि जिस मनुष्यका रक्त साफ है उसे बिच्छूकी तकलीफ कम होती है।

बिच्छूके डंक या ऐसे ही दूसरे जीवोंके डकोंका इलाज बहुत सहज है। जहाँ पर डक लगा हो उस जगह अनीदार चाकूसे छेद कर उस जगहका खून निकाल डालना चाहिए। फिर डंकको चूस कर थूँक देना चाहिए। वेदना न बढने देनेके लिए डंकके ऊपरकी ओर एक बंध बाँध कर ऊपरसे मिट्टीकी भारी पुलटिस बाँध देनी चाहिए। मिट्टीकी पुलटिससे एकदम वेदनाका बद हो जाना सम्भव है।

कितनी ही पुस्तकोमे लिखा है कि सिरका और पानी समभाग मिला कर और उसमें कपड़ेकी गादी भिगो कर उसे डंक पर रखनी चाहिए। और डकके पासका भाग नमकके पानीसे धोते रहना चाहिए। वह भाग पानीमें डुबा रखने योग्य हो तो उसे पानीमें डुबाये रहना चाहिए परन्तु इन सब उपायोंसे मिट्टीकी पुलटिस सबसे अच्छी और विशेष लाभदायक है। इस बातका अनुभव उसे भी हो जायगा जिसे अभाग्यसे कभी बिच्छूने काटा होगा और वह इस प्रयोगको करेगा। इस बातको स्मरण रखना चाहिए कि पुलटिस जहाँ तक हो मोटी बनाई जावे। उसके लिए दो-सैर मिट्टी भी अधिक नहीं है। कल्पना करो कि उँगलीमें बिच्छूने काट खाया। ऐसी हालतमें कुहनी तक मिट्टीका बाँधना अधिक नहीं है। एक लम्बे बर्तनमें मिट्टीको मल कर उसमें हाथ डुबो दिया जाय तो वेदना तुरंत कम पड़ जाती है। कानखिजूरा, ततैया आदिके डकके लिए भी ऊपर लिखा हुआ इलाज उत्तम है।

---

१४ पूर्णाहुति।

आरोग्यके सम्बन्धमें जितने प्रकरण मैंने लिखना चाहा था वे पूर्ण हो गये। यदि अवकाश मिला तो कितनी ही साधारण वस्तुओंके गुण और उनके उपयोगके सम्बन्धमें भी मेरी कुछ लिखनेकी इच्छा है। पाठकोंकी आज्ञा लेनेके पहले इन प्रकरणोंके उद्देशको फिर एक बार देख जाना आवश्यक जान पड़ता है।

मेरे चित्तमें बार बार यह प्रश्न उठा करता था कि मैंने ये प्रकरण क्यों लिखे ? क्योंकि मैं तो वैद्य नहीं हूँ। इस विषयमें मेरा ज्ञान भी बहुत ही थोड़ा है। मेरी सूचनाएँ कहीं अधूरे विचार और अधूरी देख-भालसे तो नहीं हुई हैं ? विचार करनेसे जान पड़ा कि मेरे विचार और देख-भाल अधूरे ही हैं। इनकी पूर्णता हो भी नहीं सकती। इसका कारण यह है कि प्रतिदिन जो नित्य नई बातें देखनेमें आती हैं उससे विचारोंमें भी परिवर्तन होता रहता है। तब फिर यह प्रयत्न क्यों किया गया, इस प्रश्नका उत्तर साधारण तौर पर यह दिया जा सकता है कि वैद्यक बना ही अपूर्ण प्रयोगों पर है। इस पर भी आज-कल 'ऊँट-वैद्य' के जैसी दशा विशेष देखी जाती है। और ये सब प्रकरण भी 'ऊँट-वैद्य' के जैसे समझ लिये जायँ तो कोई हानि नहीं है, परन्तु इनमें यह विशेषता है कि ये निर्दोष हेतुसे लिखे गये हैं। इनका मतलब बीमारी होने पर इलाज करनेका नही है, परन्तु बीमारियोंके रोकनेका मार्ग बतलानेका है। विचार करनेसे जान पड़ेगा कि व्याधि रोकनेके मार्ग सीधे हैं। उनके जाननेके लिए कोई खास ज्ञानकी आवश्यकता नहीं है। पर उन पर चलना कठिन है। कितनी ही बीमारियोंके सम्बन्धमें लिखना इस लिए योग्य समझा गया है कि सब व्याधियोंका मूल बहुत अंशोंमें एक है और इस लिए उनका इलाज भी एक ही होना चाहिए। और भी एक बात है कि सावधान रहने पर भी इन प्रकरणोंमें बतलाई हुई बीमारियाँ प्रायः-

हुआ करती हैं। इनके उपाय करीव करीव सब मनुष्य जानते हैं। उनां
मेरा अनुभव और भी शामिल हो जाय तो कुछ हानि सम्भव नहीं है।

मुख्य प्रश्न पर विचार करना अभी वाकी ही है कि आरोग्यकी आव
श्यकता ही क्या है? हमारा वर्ताव देखनेसे तो यही जान पड़ता है वि
हमें आरोग्यकी कोई आवश्यकता नहीं है। और यदि आरोग्यका ध्येय
यही हो कि शरीरको हृष्ट-पुष्ट कर ऐशो-आराम भोगते रहना, शरी
हीको इस संसारमें सार समझना और उसे सुदृढ़ देख कर उसका गर्व
करना, तो ऐसे आरोग्यसे शरीरका वीमार रहना ही अच्छा है।

सब मतोंने इस शरीरको ईश्वर-प्राप्तिका साधन मन्दिर माना हैं
हमें वह किराये पर मिला है। हमें उसके किरायेके वदलेमें प्रभुकी स्तुति
प्रार्थना करनी पड़ती है। किराये पर रहनेकी दूसरी शर्त यह है वि
हमें मकानका दुरुपयोग न करना चाहिए। उसे भीतर और बाहरसे स्वच्छ
रखना चाहिए। नियत समयके वाद हमें चाहिए कि हम गृह-स्वामीको
उसका मकान वैसी ही अच्छी दशामें सुपुर्द करें जैसी कि अच्छी दशामें
वह हमें मिला है। यदि किरायेकी सब शर्तोंका हम अच्छी तरह पालन
करें तो मुद्दत पूरी होने पर मालिक हम पर बहुत खुश होता है।

जीव मात्र शरीर धारी हैं। सवके शरीरकी आकृति लगभग एक हीसी है
अर्थात् सबके सुनने, देखने, सूँघने और भोग भोगनेके द्वार हैं, परन्तु
मनुष्य-देहका वर्णन चिन्तामणि रत्न कह कर किया गया है। चिन्तामणि
रत्नका अर्थ यह है कि इस रत्नसे हम जो चाहें सो पा सकते है। पशु
शरीरके द्वारा जीव ज्ञान-पूर्वक भक्ति-स्तुति नहीं कर सकता। और
ज्ञान-पूर्वक भक्ति न करनेसे मुक्ति नहीं हो सकती। मुक्ति न होनेकी
दशामें सच्चा सुख नहीं मिलता और दुःखोंका नाश नहीं होता। शरीरका
सदुपयोग हो, उसका उपयोग ईश्वरीय गृह समझ करके किया जाय तभी
वह कामका है; अन्यथा हाड़, मास और खूनका एक गंदा वोरा है।

उसमेंसे निकलते हुए हवा और पानी गंदे हैं। उसके छोटे और बड़े छद्दास निकली हुई एक भी वस्तुको हम इकट्ठी कर रखना नहीं चाहते। उनका विचार करने, उन्हें देखने और उन्हें छूने मात्रसे हम कै कर डालते है। और उनमें पैदा होनेवाले जीव बड़े परिश्रमसे रोके जाते हैं। उसी शरीके द्वारा हमें लुचपन, दगा, कपट, चोरी, ढोंग व्यभिचार वगैरह लाखों न करनेके काम करने पड़ते है। उसके लिए भाँति भाँतिके यत्न करने पड़ते हैं। और इतने यत्न करने पर भी वह ऐसा नाजुक है कि थोड़ेसे आघात सहनेकी भी उसमें शक्ति नहीं है—वह नष्ट हो जाता है।

यह शरीरकी वास्तविक दशा है। जिस वस्तुका अच्छेसे अच्छा उपयोग हो सकता है उस वस्तुमें उसके दुरुपयोग होनेकी भी सत्ता होनी ही चाहिए। ऐसा न हो तो उसकी कीमत ही नहीं आँकी जा सकती। सूर्यके तेजकी परीक्षा करनेको हम शक्तिमान् इस लिए होते है कि उसके अभावमें हम घोर अँधेरेको देख पाते हैं। और जिस सूर्यके बिना हम घड़ी भर भी जीवित नहीं रह सकते उसी सूर्यमें इतनी शक्ति ह कि वह क्षणमें जला कर खाक कर सकता है। राजा बहुत अच्छा हो सकता है वैसे ही महा नीच भी हो सकता है।

शरीर पर अधिकार जमानेके लिए जैसे ईश्वर प्रयत्न करता है वैसे ही राक्षस—शैतान—भी जी-तोड़ मेहनत करता है। जब शरीर ईश्वराधीन रहता है तब वह रत्नके समान है और जब राक्षसके अधीन हो जाता है तब नरककी खानके सदृश हो जाता है। अन्यथा वैसे तो शरीर नरकसे भी अधिक खराब है। जो विषयोंमें फँसा हुआ है, दिनभर जिसमें सब तरहके गंदे और गंदगी पैदा करनेवाले पदार्थ जाते हैं, जिससे सदा दुर्गन्ध निकलती रहती है, जिसके हाथ-पैर चोरी करनेमें लगते हैं, जिसकी जीभ न बोलने योग्य बोलती है और अखाद्य खाती है, जिसके कान न सुननेकी बातें सुनते हैं, जिसकी आँखे न देखने योग्य वस्तुको देखती है और

जिसका नाक न सूँघने योग्य सूँघता है उस शरीरको नरक न कहा जाय तो और क्या कहा जाय ! परंतु आश्चर्य है कि हम नरकको तो नरकके रूपमें देखते हैं, और शरीरका नरकके तौर पर उपयोग करने पर भी उसे दिव्य-रूपसे देखते चले आते हैं । शरीरके सम्बन्धमें इस प्रकारका एक अद्भुत ढोंग—दंभ—चला आ रहा है । पाखानेका उपयोग हम पाखाना समझ कर करेंगे, परन्तु कोई महल—मन्दिर—का उपयोग पाखानेके तौर पर करेगा तो उसका परिणाम विपरीत ही निकलेगा। अर्थात् जो शरीर-राक्षसके पंजेमें फँस गया हो उसे स्वस्थ चाहनेकी अपेक्षा उसका विनाश चाहना ही सुखकारी है ।

आरोग्यके प्रकरणों द्वारा यह बतलानेका प्रयत्न किया गया है कि ईश्वरीय नियमोंके पालनेसे शरीर आरोग्य रह सकता है, परन्तु स्मरण रहे कि राक्षसी नियमोंके अधीन हो जानेसे शरीर कभी आरोग्य नहीं रह सकता। जहाँ सच्चा आरोग्य है वहीं सच्चा सुख है। सच्चा आरोग्य प्राप्त करनेके लिए हमें स्वादेन्द्रियको जीतना ही चाहिए । ऐसा करनेसे अन्यान्य विषयेन्द्रियाँ फिर अपने आप ही वश हो जाती है । जिसने इन्द्रियोंको जीत लिया उसने जगत्को वश कर लिया, क्योंकि वह मनुष्य ईश्वरका वारिस—उसका अंश—हो जाता है । राम न रामायणमें है, कृष्ण न गीतामें है, खुदा न कुरानमें है और क्राईस्ट न बाइबिलमें है, किन्तु ये सब मनुष्यके चरित्रमें है, और चरित्र नीतिमें है । नीति सत्यमें है । सत्य है सो ही शिव है, ऐसा जो कहा जाता है वह सत्य यही है । और हमारे इन प्रकरणोंके लिखनेका भी यही मुख्य उद्देश्य है कि वह सत्य इन आरोग्यके प्रकरणोंमें भी पाठकोंको देख पड़े ।

समाप्त ।